ओ३म्

वर्षम् - ११, अङ्कः - १४२

श्रावण-भाद्रपदमासौ-२०७७

अगस्तमासः-२०२०

आर्ष-ज्योतिः

ज्योतिष्कृणोति सूनरी

श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास का द्विभाषीय मासिक मुखपत्र

अथो वयं भगवन्तः स्याम -ऋग्वेद १.१६४.४०

कोई कितना ही करें, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है।

- महर्षि दयानन्द सरस्वती

प्रसारणकार्यालयः

श्रीमद्दयानन्दार्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुलम्, पौन्धा, देहरादूनम्

९४११९०६१०४, ८८१०००५०९६

arsh.jyoti@yahoo.in gurukulpondhadehradun www.pranwanand.org

श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय-न्यास

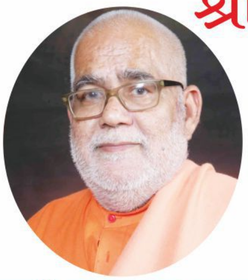

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

द्वारा सञ्चालित शाखा संस्था-४

महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम, नरसिंहनाथ, पाईकमाल, जिला-बरगढ़ (ओडिशा)

आचार्य बुद्धदेव

गुरुकुल नरसिंनाथ : एक परिचय

स्थापना - सन् २००३

संस्थापक - स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

आचार्य - आचार्य बुद्धदेव

सञ्चालन - श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय न्यास, ११९ गौतम नगर, नई दिल्ली-४९

शिक्षण का प्रकार - आर्ष शिक्षा

शिक्षण मान्यता - राज्य बोर्ड एवं महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

शिक्षण स्तर - कक्षा प्रथमा से शास्त्री पर्यन्त

छात्रों की संख्या - ९०

भूमि - १० एकड़

शिक्षणेतर प्रकल्प - संगणक शिक्षा, पुस्तकालय, गोशाला, क्रीडाक्षेत्र, आर्य समाज का प्रचार-प्रसार आदि करना

पूर्ण पता - महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम, नरसिंहनाथ, पाईकमाल, जिला-बरगढ़ (ओडिशा)-२४८००७

दूरभाष - +91-9938552151

अणुसंकेत - smdnyas99@gmail.com

❖ ओ३म् ❖

आर्ष-ज्योतिः

श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास

का

द्विभाषीय मासिक मुखपत्र

श्रावण-भाद्रपदमासौ, विक्रमसंवत्-२०७७/अगस्त-२०२०, सृष्टिसम्वत्-१,९६,०८,५३,१२१

वर्षम्-११ :: अङ्कः-१४२ मूल्यम्-रु. ५ प्रति, वार्षिकम्-५०

❖संरक्षकाः❖

स्वामी प्रणवानन्दः सरस्वती

कै. रुद्रसेन आर्यः

प्रो.देवीप्रसादत्रिपाठीवर्याः

श्रीगिरीश-अवस्थीवर्याः

❖परामर्शदातृमण्डलम्❖

डॉ. रघुवीरवेदालङ्कारः

प्रो. महावीरः

आचार्ययज्ञवीरवर्याः

श्रीचन्द्रभूषणशास्त्री

❖मुख्यसम्पादकौ❖

डॉ. धनञ्जय आर्यः

डॉ. रवीन्द्रकुमारः

❖कार्यकारी सम्पादकः❖

ब्र. शिवदेवार्यः

❖व्यवस्थापकाः❖

ब्र. आकाशार्यः

ब्र. त्रिजकिशोरार्यः

ब्र. सुधांशुः

❖कार्यालयः❖

श्रीमद्दयानन्द-आर्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुलम्

दूनवाटिका-२, पौन्धा,

देहरादूनम् (उत्तराखण्डः)

दूरवाणी - ०९४१११०६१०४,८८१०००५०९६

website: www.pranwanand.org

E-mail : arsh.jyoti@yahoo.in

विषय-क्रमणिका

विषयः	पृष्ठः
आर्य्याभिविनयः	२
सम्पादकीय	३
महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित...	६
विश्वव्यापी सभी समस्याओं का समाधान...	०९
एतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्	१४
गुरुकुल-गौरव (कविता)	१८
स्वतन्त्रतादिवससन्देशः	१९
मेरा गुरुकुल (कविता)	२०
योगदर्शनशिक्षणम्	२२
काश्मीरघाटी सधवा बभूव	२३
संस्कृतशिक्षणम्	२४

न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशनतिथि-३ अगस्त २०२० :: डाकप्रेषणतिथि-८ अगस्त २०२०

आर्य्याभिविनयः

(१०)

ऋषिः-राहूगणपुत्रो गोतमः। **देवता**-विश्वेदेवा। **छन्दः**- निचृज्जगती। **स्वरः**- निषादः।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥

- ऋग्वेद १/८९/५॥

तम्। ईशानम्। जगतः। तस्थुषः। पतिम्। धियम्ऽजिन्वम्। अवसे। हूमहे। वयम्। पूषा। नः। यथा। वेदसाम्। असत्। वृधे। रक्षिता। पायुः। अदब्धः। स्वस्तये॥

आर्याभिविनयः-

हे सर्वाधिस्वामिन्! आप ही **(जगतः तस्थुषः)** चर और अचर जगत् के **(ईशानम्)** रचने वाले हो, **(धियं जिन्वम्)** सर्वविद्यामय विज्ञानस्वरूप बुद्धि को प्रकाशित करनेवाले, सब को तृप्त करने वाले प्रीणनीयस्वरूप **(पूषा)** सबके पोषक हो, उन आपका हम **(नः अवसे)** अपनी रक्षा के लिए **(हूमहे)** आह्वान करते हैं। **(यथा)** जिस प्रकार आप हमारे विद्यादि धनों की वृद्धि वा रक्षा के लिए **(अदब्धः रक्षिता)** निरालस रक्षा करने में तत्पर हो, वैसे ही कृपा करके आप **(स्वस्तये)** हमारी स्वस्थता के लिए **(पायुः)** निरन्तर रक्षक विनाशनिवारक हो। आपसे पालित हम लोग सदैव उत्तम कामो में उन्नति और आनन्द को प्राप्त हों॥

अन्वयः-

हे विद्वन्! यथा पूषा नोऽस्माकं वेदसां वृधे यो रक्षिता स्वस्तयेऽदब्धः पूषा पायुरसत्तथा त्वं भव यथा वयमवसे तं जगतस्तुषस्पतिं धियं जिन्वमीशानं परमात्मानं हूमहे तथैतं त्वमाप्याह्वय॥

पदार्थः-

(तम्) सृष्टिविद्याप्रकाशकं **(ईशानम्)** सर्वस्याः सृष्टेर्विधातारम् **(जगतः)** जङ्गमस्य **(तस्थुषः)** स्थावरस्य **(पतिम्)** पालकम् **(धियम्)** समस्तपदार्थचिन्तकम् **(जिन्वम्)** सर्वैः सुखैस्तर्प्पकम् **(अवसे)** रक्षणाय **(हूमहे)** स्पर्धामहे **(वयम्) (पूषा)** पुष्टिकर्ता परमेश्वरः **(नः)** अस्माकम् **(यथा) (वेदसाम्)** विद्यादिधनानाम्। **वेद इति धननाम।** (निघण्टु २.१०) **(असत्)** भवेत् **(वृधे)** वृद्धये **(रक्षिता) (पायुः)** पालनकर्त्ता **(अदब्धः)** अहिंसिता **(स्वस्तये)** सुखाय॥

संस्कृताभिविनयः-

हे सर्वाधिस्वामिन् भवान्नेव चराचरस्य जगतः रचयितास्ति सर्वविद्यामय्याः विज्ञानस्वरूपायाः बुद्ध्याः प्रकाशकः, सर्वतृप्तिकर्त्ता, प्रीणनीयस्वस्रूपः सर्वेषां पोषकोऽस्ति। तं भवन्तं वयं निजरक्षार्थमाह्वयामः। यथा भवान्नस्मदीयविद्यादिध नानां वृद्धये रक्षणाय वा अतन्द्ररक्षणतत्परोऽस्ति तथैव कृपां विधाय नः स्वस्थतायै सततं रक्षकः अस्ति। भवत्पालिता वयं सदैवोत्तमकर्मसु उन्नतिमानन्दं च प्राप्नुमः॥

- शिवकुमारः, गुरुकुलपौन्धा, देहरादूनम्

सम्पादक की कलम से...

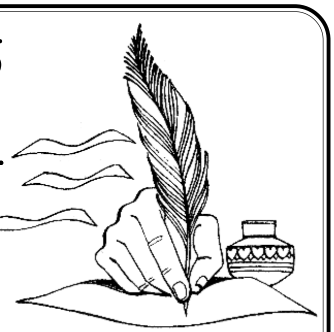

श्रावणी उपाकर्म

भारतीय पर्व परम्परा में सर्वोत्तम व उत्कृष्ट पर्व का स्थान श्रावणी उपाकर्म को दिया जाता है। क्योंकि यह लोगों को ज्ञान से आलिप्त करने का पर्व है। इस पर्व से लोग अपने अज्ञानान्धकार को समाप्त कर प्रकाश की ओर गति करते हैं।

इस पर्व की परम्परा आज से नहीं अपितु प्राचीन काल से निरन्तर चली आ रही है। प्राचीन काल में श्रावणी मास में वर्षा के प्रारम्भ हो जाने के कारण ऋषि-मुनि पर्वतों की कन्दराओं से बाहर निकल कर यत्र-तत्र जाकर वेदों का प्रचार-प्रसार, स्वाध्याय के लिए लोगों को जागरूक करना, बड़े-बड़े यज्ञों का आयोजन आदि कार्यों को सम्पादित किया करते थे। यह समय लोगों के लिए अत्युपयुक्त रहता है, क्योंकि प्राचीन काल से ही भारतवर्ष एक कृषि प्रधान देश रहा है। वर्षा ऋतु के कारण कृषक एवं अन्य मनुष्य प्रायः अवकाश से युक्त होते हैं।

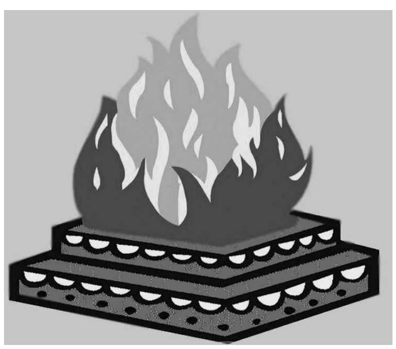

प्रथम तो यह विचारणीय है कि इस पर्व का नाम श्रावणी क्यों रखा गया, इसका उत्तर हमें यह प्राप्त होता है कि यह समय श्रवण नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा का होता है, अतः यह श्रावणी है। इसी श्रावणी पूर्णिमा के आधार पर ही इस मास का नाम श्रावण मास रखा गया।

यथार्थ में इस पर्व का नाम श्रावणी उपाकर्म है, जिसका उल्लेख ऋग्वेदीय पारस्कर गृह्यसूत्र में प्राप्त होता हैं - **अथातोऽध्यायोपकर्म........** (पा. २/१०/१-२) यह पर्व विशेषतः ज्ञान-विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों के द्योतन का है। श्रावणी पर्व का आरम्भ विभिन्न ग्रन्थों के अन्वेषण के पश्चात् ज्ञात हुआ कि इस पर्व का प्रारम्भ श्रावण मास की शुक्ल पूर्णिमा से होता है, जिसे श्रावणी उपाकर्म कहते हैं तथा इसकी सम्पूर्ति पौष मास की शुक्ल पूर्णिमा को होती है, जिसे उत्सर्जन कहा जाता है।

इस विशेष ज्ञान चर्चा के काल की समयावधि मनुस्मृति के आधर पर लगभग १४८ से १६५ दिन तथा पारस्करगृह्यसूत्र के अनुसार लगभग १४९ से १६० दिन की होती है। इसके लिए पारस्कर गृह्यसूत्र का प्रमाण प्राप्त हाता है - **अथातोऽध्यायोपाकर्म। ओषधीनां प्रादुर्भावे श्रवणेन श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणस्य पञ्चमीं हस्तेन वा।** (पा.गृ.-२/१०/१-२) तथा पण्डित चन्द्रमणि विद्यालङ्कार तथा पण्डित गङ्गाप्रसाद उपाध्याय के मनुस्मृति भाष्य का प्रमाण प्राप्त होता है -

श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां वाप्युपाकृत्य यथाविधि।
युक्तश्छन्दांस्यधीयीत मासान्
विप्रोऽर्धपञ्चमान्॥
पुष्ये तु छन्दसां कुर्यात् बहिरुत्सर्जनं द्विजः।
माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि॥

– मनुस्मृति –४/९५–९६

इन सबके अवलोकन से ज्ञात होता है कि ऋषि–मुनि इस कालावधि पर समाज में आकर पण्डित अथवा जन सामान्यवर्ग से ज्ञान–विज्ञान सम्बन्धी चर्चा–परिचर्चायें किया करते थे किन्तु काल की गति से ग्रसित होकर लोग इस पर्व की समयावधि को कम करके वर्तमान में एक दिन का उपलक्षण मात्र कर दिया गया है, जिसकी पुष्टि वर्तमान को प्रत्यक्ष देखने से हो जाती है।

वर्तमान समाज ने उपाकर्म एवं उत्सर्जन का नाम ही भुला दिया है। अब केवल मात्र यह पर्व श्रावणी के नाम से प्रसिद्ध है।

यह पर्व अध्ययन–अध्यापन परम्परा का पर्व है। इस पर्व पर स्वाध्याय और प्रवचन को जाग्रत रखने का संकेत किया गया है। स्वाध्याय के दो अर्थ हैं। एक अर्थ तो यह है कि जो कुछ पढ़ा है, शिक्षा ग्रहण की है, उसका पाठ करते रहना, नवीन ग्रन्थों का अध्ययन करना। दूसरा अर्थ यह है कि 'स्व' का अपने–आप का अध्ययन करना, यह देखते रहना कि मैं जीवन में क्या बना हूँ? स्वाध्याय के अतिरिक्त अपनी शिक्षा को जीवित रखने के लिए प्रवचन भी आवश्यक है। मनुष्य जो कुछ जानता है, जिससे उसका जीवन उच्च बना है, उसको प्रवचन द्वारा दूसरों तक पहुँचाना भी उसका कर्त्तव्य है। इसी तथ्य को तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा गया है कि **'ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च'** अर्थात् नित्य नियमों के अनुसार जीवन यापित करते हुए स्वाध्याय व प्रवचन करना चाहिए।

समाज में सर्वत्र ही स्वाध्याय की परम्परा लुप्तप्रायः होती जा रही है। इस पर्व से हमें यही संकल्प लेना चाहिए कि हम स्वाध्याय को अपने जीवन में अपनायें। उपनिषद्कार कहते हैं कि **स्वाध्यायान्मा प्रमदः** अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। और व्यक्ति को स्वाध्याय तक ही समीति नहीं होना चाहिए अपितु **स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां मा प्रमदितव्यम्** अर्थात् स्वाध्याय और प्रवचन में कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिए।

मनुस्मृति में भी कहा गया है कि –

'नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमांश्चैव वैदिकान्'

अर्थात् नित्य प्रति वेद और सत्यशास्त्रों का अवलोकन करना चाहिए।

योगदर्शन में स्वाध्याय की महत्ता को प्रकट करते हुए कहा गया है –

स्वाध्यायादिष्टदेवतासंप्रयोगः (योग.२.४४)

अर्थात् स्वाध्याय से परमपिता परमेश्वर की

प्राप्ति होती है।

हम अपने स्वाध्याय को नित्यप्रति बढ़ाने वाले हों, जिससे नानाविध ज्ञान प्राप्त हो सकेगे। इसीलिए मनुस्मृतिकार कहते हैं कि –

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्राणि समधिगच्छति।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते।।

–मनु. ४.२०

यह पर्व उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार के लिए भी जाना जाता है, क्योंकि उपनयन धारण करने के उपरान्त ही वेदादि ग्रन्थों का विधिवत् अध्ययन आरम्भ होता है।

मध्यकाल में इस पर्व की परम्परा ने विविध रूपों को धारण किया, जैसे – सर्पों की बलि देना, नदी वा तालाब पर जाकर पञ्चगव्यप्राशन एवं स्नान आदि करके इस पर्व की पूर्णता समझी जाती थी। यह परम्परा भी कुछ काल तक चलती रही, इसके पश्चात् अब वर्तमान का प्रचलन इस प्रकार है कि गुरुकुलों में, शिक्षण–संस्थानों में विद्यारम्भ का दिवस इस पर्व को माना जाता है।

इसी दिवस नूतन विद्यार्थियों का उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार भी कराया जाता है। विभिन्न स्थानों पर वेदपारायण जैसे महायज्ञों का आयोजन कराया जाता है, स्वाध्याय शिविरों का आयोजन होता है, वेद स्वाध्याय सप्ताह एवं संस्कृत दिवस व संस्कृत सप्ताह के रूप में मनाया जाता है। कुछ शोधज्ञों का मानना है कि इसी दिवस वेद का ज्ञान प्राप्त हुआ, किन्तु इसका स्पष्ट प्रमाणपूर्ण ज्ञान कहीं नहीं मिलता है। कहीं–कहीं घर की स्त्रियाँ अपने घर की दीवारों पर गेरुँआ आदि

रंग से श्रावण की मूर्तियाँ बनाकर सेवियाँ का भोग लगाती हैं। राजपूत काल में कन्याओं ने अपनी रक्षा के लिए वीरों के हाथ रक्षासूत्र बाँधने की परम्परा को जन्म दिया। यह रक्षासूत्र अबला कन्या जिस वीर को बाँध देती थी, वह वीर उस कन्या का भाई बन उसकी रक्षा के लिए सदैव उद्यत रहता था। इस परम्परा का सम्बन्ध महारानी कर्णवती गुजरात के बादशाह से अपने राज्य की रक्षार्थ मुगल बादशाह हुमायूँ को रक्षासूत्र भेजने से भी लिया जाता है।

यह पर्व हम सबके जीवन को आनन्द से विभोर करने का पर्व है। स्वाध्याय को अपने जीवन का अङ्ग बनायें।

आज आवश्यकता है कि हम अपने स्वाध्याय को अधिक से अधिक बढ़ायें, जिससे हम सत्य अर्थात् निणर्यात्मक ज्ञान को प्राप्त हो सकें। इस पर्व को मनाने की तभी सार्थकता होगी, जब हम अपने लिए संकल्प करें कि हम अपने जीवन के व्यस्ततम काल में से कुछ काल को नित्यज्ञान के देने वाले वेदादि शास्त्रों का प्रतिदिन स्वाध्याय करके अपने जीवन में धारण करेंगे...

–शिवदेव आर्य,
गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित पठन-पाठन विधि का संरक्षण आवश्यक क्यों?

❑ डॉ. सोमदेव शास्त्री...✍

वेदों की ओर लौटो का उद्घोष करने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती का सम्पूर्ण चिन्तन वेदों से अनुप्रणीत है। सूत्र रुप में सभी ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा वेदों में प्राप्त है किन्तु महाभारत के पश्चात् भारतीय एवं विदेशी भाष्यकारों द्वारा स्वमन्तव्य के लिए अनेक शब्दों का भ्रामक अर्थ कर वेद की व्यापकता एवं प्राचीनता पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया। इस विषम समस्या का समाधान महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्षग्रन्थों में पाया तथा इसी का अनुसरण कर अपना वेदभाष्य किया। महर्षि दयानन्द ने वैदिक सिद्धान्तों का मूल ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त के महर्षियों के मन्तव्यों को स्वीकार किया। सभी दु:खों का मूल अविद्या व अशिक्षा है।

यह सभी को ज्ञात है कि मैकाले ने जो शिक्षा व्यवस्था स्थापित की, वह केवल मानव को मसीन बनाने के लिए है, जिसे आज अनुभव भी किया जा रहा है। स्वतन्त्र भारत में महर्षि दयानन्द की शिक्षा नीति स्वीकार की जाती तो निश्चित रुप से वैदिक विज्ञान के आधार पर अब तक हम विश्व का नेतृत्व करते किन्तु शोक है...। शिक्षा की परिभाषा करते हुए महर्षि लिखते हैं - **'जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियतादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूटें, उसको शिक्षा कहते हैं।'** श्सा विद्या या विमुक्तयेश इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए महर्षि ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश (तृतीय समुल्लास), ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (पठन-पाठन विषय), संस्कार-विधि (वेदारम्भ संस्कार) में पठन-पाठन विधि का स्पष्ट उल्लेख किया है। तृतीय समुल्लास में महर्षि लिखते हैं कि **'अब जो-जो पढ़ना-पढ़ाना है वह-वह अच्छी प्रकार परीक्षा करके होना योग्य है। परीक्षा पांच प्रकार से होती है।'** इन पांच प्रकार की परीक्षणविधि को बताते हुए न्याय, वैशेषिक, सांख्य, महाभाष्य आदि ग्रन्थों के प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। तदनन्तर**'अथ पठन-पाठनविधि :'** लिखकर पढ़ने-पढ़ाने का प्रकार बताया है। इसमें सर्वप्रथम पाणिनिमुनिकृत (वर्णोच्चारण) शिक्षा से आरम्भ किया है। अष्टाध्यायी, धातुपाठ, उणादिकोष, महाभाष्य, निघण्टु, निरुक्त, छन्दशास्त्र, मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण, महाभारत के उद्योगपर्वान्तर्गत विदुरनीति, दर्शन, उपनिषद् आदि ग्रन्थों को पढ़ने-पढ़ाने का प्रकार लिखा है। इसी सन्दर्भ में महर्षि लिखते हैं कि पूर्ण वैयाकरण होकर वैदिक व लौकिक शब्दों का व्याकरण से पुन: अन्य शास्त्रों को शीघ्र सहज में पढ़-पढ़ा सकते हैं किन्तु जैसा बड़ा परिश्रम व्याकरण में होता है वैसा श्रम अन्य शास्त्रों में करना नहीं पड़ता। वे आगे लिखते हैं कि-महर्षि लोगों का जहाँ तक हो वहाँ तक सुगम और जिस के ग्रहण करने में समय थोड़ा लगे इस प्रकार का होता है....आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है जैसा एक गोता लगाना बहुमूल्य मोतियों का पाना। महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्ष ग्रन्थों के प्रबल पोषक थे। वे इसी प्रकारण में लिखते हैं-**'ऋषिप्रणीत ग्रन्थों को इसलिये पढ़ना चाहिये कि वे बड़े विद्वान् सब शास्त्रवित् और धर्मात्मा थे।'** महर्षि दयानन्द अपनी पठन-पाठन विधि में परा-अपरा (ब्रह्म विज्ञान), वैद्यकशास्त्र (चिकित्साविज्ञान), राजधर्म (राजनीतिविज्ञान), भूगर्भविज्ञान, शिल्पविज्ञान, संगीत-कलाविज्ञान, गणितशास्त्रविज्ञान, यान्त्रिकी विज्ञान आदि का समावेश किया है।

महर्षि दयानन्द जनख्रजन तक आर्षग्रन्थों को पढ़ने-पढ़ाने के लिये प्रेरित करते थे। आर्ष परम्परा के संरक्षक पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी ने श्महर्षि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहासश नवम अध्याय में वेदांगप्रकाश की रचना का प्रयोजन प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि-**'महर्षि ने अपने कार्यकाल में संस्कृत भाषा के प्रचार और उन्नति के लिये महान् प्रयत्न किया था। उन्हीं के प्रेरणा से प्रभावित होकर अनेक व्यक्ति संस्कृत सीखने के लिए लालायित हो उठे थे। उन्होंने स्वामी जी से संस्कृत सीखने के लिए उपयोगी ग्रन्थों की रचना की प्रार्थना की। उसी के फलस्वरूप ऋषि ने संस्कृतवाक्यप्रबोध रचा और वेदांग प्रकाश के विविध भागों की रचना कराई।'** जन सामान्य तक के लिए आर्ष ग्रन्थों को सुगमता से पढ़ने के लिए वेदांग प्रकाश को १४ भाग में प्रस्तुत किया। इन ग्रन्थों को पढ़ जनसामान्य वेद को सुगमता से पढ़ सकता है।

आर्य समाज का मूल ध्येय वेदों का प्रचार-प्रसार करना है। आर्य समाज काकडवाड़ी मुम्बई के स्थापना के अवसर पर आर्यजनों का आग्रह था कि महर्षि दयानन्द आचार्य पद पर आसीन हों थे किन्तु महर्षि ने अस्वीकार कर केवल सदस्य बनना स्वीकार किया। महर्षि दयानन्द का नाम सदस्यता पंजिका में '३१ वें नम्बर' पर है, जिसमें 'कामधन्धा-वेदप्रचार' लिखा है। इससे स्पष्ट हो जाना चाहिए कि महर्षि दयानन्द वेदप्रचार को कितना महत्त्वपूर्ण मानते थे।

महर्षि दयानन्द के पश्चात् प्रथम पंक्ति के नेतृत्व ने इस संकल्प के लिए अपने जीवन की आहुति दी। महर्षि के स्मारक के रूप में डी.ए.वी. की स्थापना हुयी किन्तु आधुनिकता के चकाचौन्ध ने उसे घेर लिया। महर्षि के मूल उद्देश्य की पूर्ति के लिये महात्मा मुंशीराम, पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी जैसे महापुरुषों ने अपने अथक परिश्रम व सर्वस्व दान कर सत्यार्थप्रकाश में वर्णित पठन-पाठन विधि का अनुसरण करने के लिए गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की। इतिहास ने पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति, पण्डित चन्द्रमणि, आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री, पण्डित उदयवीर शास्त्री, स्वामी ब्रह्ममुनि, पण्डित क्षितीज वेदालंकार, पण्डित बुद्धदेव विद्यालंकार, पण्डित विश्वनाथ विद्यालंकार, पण्डित प्रकाशवीर शास्त्री, आचार्य राजवीर शास्त्री, आचार्य सुदर्शनदेव, आचार्य विजयपाल विद्यावारिधि,पण्डित विशुद्धानन्द, आचार्य वेदव्रत शास्त्री, आचार्य वेदपाल सुनीत प्रभृति विद्वानों को देखा।

इसी परम्परा का अनुसरण कर अनेके गुरुकुलों की स्थापना कर स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी सच्चिदानन्द योगी, स्वामी ओमानन्द, स्वामी सर्वदानन्द, स्वामी व्रतानन्द, पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक, आचार्य बलदेव, स्वामी त्यागानन्द, स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी ब्रह्मदेव, स्वामी धर्मेश्वरानन्द आदि महापुरुषों ने इस परम्परा का संवर्धन किया, जिसे अद्यावधि स्वामी धर्मानन्द, स्वामी प्रणवानन्द, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी सत्यपति, आचार्य आनन्द प्रकाश, आचार्य विजयपाल, स्वामी ऋतस्पति, आचार्या सुमेधा, आचार्या सुकामा, आचार्या सूर्यादेवी, आचार्या धारणा, आचार्या नन्दिता, आचार्या प्रियंवदा, आचार्य उदयन मीमांसक, आचार्य प्रदीप, आचार्य ओम्प्रकाश आदि आचार्य संरक्षित कर रहे हैं।

आर्य समाज का आंगन वैदिक विद्वानों की किलकारियों से चहंकता-महकता रहा है। आर्य समाज की छावनी से वैदिक विद्वान् धीरे-धीरे जा रहें हैं, उनकी पूर्ति व महर्षि की आज्ञा का पालन उनकी निर्दिष्ट पठन-पाठन व्यवस्था से ही सम्भव है। इस आधुनिकता की दौड़ में महर्षि निर्दिष्ट पठन-पाठन का संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। वैदिक वाड्मय में उपस्थित ज्ञान-विज्ञान के अनुसन्धान के लिए ठोस कार्य करना चाहिए किन्तु खेद है...। पहले आर्यसमाजों, अनेक प्रान्तीय सभाओं तथा सार्वदेशिक सभा के माध्यम से आर्षग्रन्थों का प्रचार-प्रसार, प्रकाशन व

अनुसन्धान किया जाता रहा। अब आर्ष पठन-पाठन विधि को सुरक्षित रखना भी एक चुनौती बन गयी है। आप भवन बना सकते हैं, आधुनिक विज्ञान के संसाधन भी जुटा सकते हैं किन्तु इस दौड़ में आर्यसमाज की मूल आत्मतत्त्व वेदों का प्रचार-प्रचार कैसे करोगे? आत्मा के बिना शरीर की क्या गति होती है, यह सभी जानते हैं। डॉक्टर, इंजीनियर, अधिवक्ता, आई.ए.एस., आई.पी.एस. आदि को बनाने वाली अनेक संस्थायें कार्य कर रहीं हैं। सम्भव हो तो ऐसे डॉक्टर, इंजीनियर, अधिवक्ता, आई.ए.एस., आई.पी.एस. आदि का वैदिक वाङ्मय से कैसे परिचित करायें, इसपर कार्य करना आवश्यक है। हमारे पूर्वजों ने न्यायमूर्ति गंगाप्रसाद, पण्डित श्याम कृष्ण वर्मा, पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय, पण्डित मंशाराम वैदिक तोप, श्री हरविलास शारदा आदि जैसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। कन्हीं आधुनिकता का अनुसरण करने में अन्धे होकर डी.ए.वी.(पी.जी.) कॉलेज देहरादून के संस्कृतविभाग के ठीक सामने स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति लग जाये और हम देखते रह जायें ऐसा न हो। अतः महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित पठन-पाठन विधि का संरक्षण व संवर्धन आवश्यक है और यह कार्य गुरुकुलों से ही सम्भव है। **- अध्यक्ष, वैदिक मिशन मुम्बई**

श्रीमद्दयानन्द वैदिक गुरुकुल न्यास (परिषद्) द्वारा

स्नातक/स्नातिका पंजीकरण

(गुरुकुलों से अधीत समस्त छात्र/छात्राओं के निमित्त)

श्रीमद्दयानन्द वैदिक गुरुकुल न्यास (परिषद्) द्वारा समस्त गुरुकुलों से अधीत छात्र/छात्राओं, स्नातक/स्नातिकाओं (व्रतस्नातक, विद्यास्नातक, विद्याव्रतस्नातक) का विवरण एकत्रित किया जा रहा है, जिससे भविष्य में आयोजित की जाने वाली गतिविधियों को आप तक सरलता से प्रेषित किया जा सके। अतः आप सभी से निवेदन है कि अविलम्ब प्रपत्र पूर्ण करें तथा अपने मित्रों को भी इस प्रपत्र को पूर्ण करने के लिए प्ररित करें। प्रपत्र का लिंक 9411106104 (आचार्य डॉ. धनंजय) तथा 8810005096 (शिवदेव आर्य) से प्राप्त कर सकते हैं।

आपको सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि भारत के समस्त गुरुकुलों को एक पोर्टल पर देखने के लिए श्रीमद्दयानन्द वैदिक गुरुकुल न्यास (परिषद्) द्वारा वेबसाईट का निर्माण प्रगतिपथ पर है।

- स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती
अध्यक्ष (वैदिक गुरुकुल न्यास)

आप आपने लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, ग्रन्थ-समीक्षा व सुझाव हमें ई.मेल - arsh.jyoti@yahoo.in कर सकते हैं।

विश्वव्यापी सभी समस्याओं का समाधान- वैदिक विद्याविधान : महर्षि देव दयानन्द का विज्ञापन

❑ आचार्य उदयन मीमांसक...✍

भूतानां प्राणिनः श्रेष्ठाः प्राणिषु बुद्धिजीविनः ।
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः ॥

- मनु० १.९६

चराचर जगत् में जीवधारी (प्राणी) श्रेष्ठ हैं, प्राणियों में बुद्धिजीवी श्रेष्ठ हैं। बुद्धिजीवियों में मनुष्य श्रेष्ठ हैं और मनुष्यों में वेदवेत्ता, ब्रह्मविद् सर्वश्रेष्ठ है।

इस जगत् में मनुष्य सर्वोत्तम प्राणी के रूप में जन्मा है। पर इसका ज्ञान स्वाभाविक न होकर, नैमित्तिक है अर्थात् उसे माता, पिता, गुरु आदि से ही ज्ञान प्राप्त होता है, अन्यथा वह पशुपक्षियों से भी अधिक अधम प्राणी सिद्ध होता । अतः मनुष्य को ज्ञान, विद्या, कलादि की अत्यन्त आवश्यकता होती है । **मनुष्य को मनुष्यश्रेणी में स्थापित करने वाला प्रमुख साधन ही विद्या व ज्ञान कहलाता है ।** महर्षि दयानन्द ने भी कहा है कि **"जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियतादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूटें, उस को शिक्षा कहते हैं"** (स्वमन्तव्या०)।**"जिससे ईश्वर से लेके पृथिवीपर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर उनसे यथायोग्य उपकार लेना होता है, इसका नाम 'विद्या' है"** (आर्योद्देश्य०)। पर सम्प्रति प्रचलित विद्याविधान से तो विपरीत दुष्परिणाम ही दृग्गोचर हो रहें हैं। इस आधुनिक विद्या में सहृदयता रहित मनुष्य रूपी यन्त्रों के निर्माण की शक्ति अवश्य है, पर वह मानवीय संस्कारोपेत मनुष्य के निर्माण में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हुआ है। वैयक्तिक जीवन से लेकर देश एवं विश्वभर के क्षेत्रों में सर्वत्र स्वार्थ, अनाचार, अत्याचार, अधर्म, अन्याय, अवनीति, अकर्मण्यता, विषयलोलुपता, दुराचार, भ्रष्टाचार, जातिवाद आदि से बीभत्स दुःस्थिति बनी हुई है । माता-पिता, अध्यापक और विद्यार्थी सभी लोग आधुनिक विद्या से केवल धन की ही आशा करते हैं । उसके लिए सभी अपने-अपने मनो-अश्वों को चहूँ दिशाओं में दौड़ाते हैं । पर आज का मनुष्य यह समझ नहीं पा रहा है कि धनादि ऐश्वर्य अपने साध्य नहीं हैं, न ही वे शाश्वत सम्पत्ति हैं। आदर्श एवं संस्कारादि विहीन आधुनिक शिक्षा से मनुष्य पथभ्रष्ट होकर नरपिशाच बनता जा रहा है । तत्परिणामतः रक्षक ही भक्षक के रूप में, प्राणदाता (डाक्टर) प्राणान्तक के रूप में, उपकारक अपकारक के रूप में, निर्माता नाशक के रूप में, आचार्य अनाचारी के रूप में, विद्यार्थी अविनीत के रूप में, नागरिक अनागरिक के रूप में परिणत होते जा रहें हैं।

आक्रामक अंग्रेजियों की कुटिलनीति के कारण ही वेद और ऋषि, मुनि आदि महापुरुषों से विभूषित एवं सर्वविधसुखशान्तियों से सम्पन्न विश्वगुरु भारत आज अत्यधिक विषम एवं विपत्करपरिस्थितियों से आक्रान्त है। परिणामों पर विचार किये विना किया गया कार्य सर्वथा निष्फल और दुष्फल होता है, इसके लिए यह एक बहुत बड़ा उदाहरण है। अब भी भारतीय सचेत होकर धर्म, मानवता, विश्वभ्रातृत्व, संस्कृति, सभ्यता आदि को विनष्ट करनेवाले इन भयानक विषम परिस्थियों को समूल विनाश करने के लिए वेदों की ओर लौटें और सनातन वैदिक संस्कृति तथा पुरातन आर्षपरम्परा के अनुकूल विद्याविधान को अपनायें, जिससे इस देश का पूर्व दिव्य वैभव पुनः देखा जा सकता है।

गुरुकुल – विद्याविधान की विशेषता और महत्त्व

१. **"सा विद्या या विमुक्तये"**– जिससे समस्त दुःख समाप्त होकर शाश्वत सुख-शान्ति की प्राप्ति होती है, वही विद्या कहलाती है । यह अलौकिक वेदविद्या केवल गुरुकुलों में ही दी जाती है ।

२. **"मनुर्भव, देवो भव, ऋषिर्भव"**– दया, प्रेम आदि मानवताधर्म से युक्त मनुष्य का निर्माण करना गुरुकुलविद्या की विशेषता है। जिससे एक दिव्य मानव का भी निर्माण होता है–**"अथ ये ब्राह्मणाः (ब्रह्मजिज्ञासवः) शुश्रुवांसोऽनूचानास्ते मनुष्यदेवाः"** (शत० ब्रा० २.४.३.१४) और गुरुकुलीय विद्या से आत्मविद् योगी, ऋषि, मुनि भी बन सकते हैं । वेदविद्या के अध्ययन से प्राप्त प्रयोजनों का वर्णन करते हुए ऋग्वेद स्वयं कहता

है कि **"अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः। यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्"** (ऋ० १०.१२५.५)। यहाँ स्पष्टरूप से कहा गया है कि देव और मनुष्यों द्वारा सेवित वेद के पढ़ने से मनुष्य ब्रह्मतेजोयुक्त, चतुर्वेदविद्याविभूषित, सुमेधासम्पन्न ऋषित्वादि दिव्यगुणापन्न बन जाता है ।

३. "मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव"— गुरुकुलीय विद्या का विद्यार्थी माता, पिता और गुरु के महदुपकारों को पहचान कर जीवनभर उनके प्रति श्रद्धा से नतमस्तक होता है एवं उनके उपदेशों और आदेशों का अनुकरण करता हुआ उनके सदृश दिव्यगुणान्वित होता है ।

४. "सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां मा प्रमदितव्यम्, सत्यान्न प्रमदितव्यम्, धर्मान्न प्रमदितव्यम्, श्रद्धया देयम्, अश्रद्धया देयम्, प्रिया देयम्, भिया देयम्"(तै०उप० ७.११.१-४) -सत्य ही बोलो, धर्म का ही आचरण करो, प्रमादरहित होकर निरन्तर वेदादि सत्यशास्त्रों का स्वाध्याय एवं प्रवचनों का अनुष्ठान करो, किसी भी परिस्थिति में दान की प्रवृत्ति का त्याग मत करो इत्यादि धार्मिक, नैतिक और आत्मिक संस्कारों से गुरुकुलीय विद्यार्थी संस्कारित होता है।

५. संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्(ऋ०१०.१९१.२) -परस्पर का व्यवहार, संवाद, मनोविचार आदि सभी का एक हो। इस प्रकार के आदर्श व्यवहारों से गुरुकुलीय विद्यार्थी प्रशिक्षित होते हैं।

६. उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्। सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र।।

-अथर्व० ८.४.२२

अज्ञान, मोह, राग-द्वेष, मात्सर्य, काम, इन्द्रियदौर्बल्य, अहंकार, लोभ आदि आसुरीभावों को विनष्ट कर यम(अहिंसा, सत्य,अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह), नियम (शौच,सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान) आदि दैवीभावनायें विद्यार्थियों को हृदयंगम कराये जाते हैं।

७. अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

-शार्ङ्गधरपद्धति २७३

अपना-पराया, मेरा-तेरा आदि स्वार्थ की भावनायें अल्पबुद्धि वालों में ही उत्पन्न होती हैं। उदार व्यक्ति और ज्ञानी तो सम्पूर्ण विश्व के प्रति अपने परिवार की भावना रखता है। इत्यादि नीतिवाक्य गुरुकुलीय विद्यार्थियों के मनों में अंकुरार्पित किये जाते हैं।

८. "सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम्"(मनु० ५.१०६) धर्मानुसार धनाद्यैश्वर्यों को प्राप्त करना ही सभी पवित्रताओं में सर्वोत्तम पवित्रता है।**"अकृत्वा परसन्तापमगत्वा खलनम्रताम्। अनुसृत्य सतां मार्गं यत् स्वल्पमपि तद् बहु"**(शार्ङ्गधरपद्धति-३०७)।। दूसरों को दुःख दिये विना, दुष्टों की खुशामदि के विना, सन्मार्ग पर चलते हुए धर्मपूर्वक अर्जित थोड़ा भी धन बहुत हो जाता है, सुखदायक हो जाता है। इस प्रकार के पवित्र विचारों से, अपरिग्रहत्व व कुम्भीधान्यत्व से वेद का विद्यार्थी प्रबुद्ध किया जाता है।

९. आर्षग्रन्थों के अध्ययन से होने वाले एक प्रमुख प्रयोजन का वर्णन करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं—**"महर्षि लोगों का आशय जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिसके ग्रहण में समय थोड़ा लगे, इसप्रकार का होता है। क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि जहाँ तक बने वहाँ तक कठिन रचना करनी । जिसको बड़े परिश्रम से पढ़के अल्प लाभ उठा सके। जैसे पहाड़ का खोदना कौड़ी का लाभ होना और आर्षग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है कि जैसा एक गोता लगाना और बहुमूल्य मोतियों का पाना"** (सत्यार्थ० तृ०समु०)।

१०. आधुनिक विद्यालयों में विद्यार्थियों को बहुत से ऐसे विषय पढ़ाये जाते हैं, जो उनके जीवन में कभी भी, किसी भी क्षेत्र में किसी भी प्रकार से उपयोग में नहीं आ सकते। यह सब केवल विद्यार्थियों को भार मात्र है। पर गुरुकुलों की आर्षपद्धति में अनावश्यक व निरर्थक विषय कभी भी पढ़ाये नहीं जाते। अध्यापित प्रत्येक विषय विद्यार्थी के जीवन में एक अमूल्य ज्ञाननिधि एवं परम उपयोगी ही सिद्ध होता है।

११. अधुनातन विद्यालयों में अंग्रेजों के द्वारा प्रकल्पित तथा आधारहीन मिथ्या इतिहास पढ़ाया जाता है। इतना ही नहीं आक्रामकों के दुश्चरित्र को पढ़ाकर विद्यार्थियों का मनोबल गिराया जाता है । पर गुरुकुलों में यथार्थ इतिहास, ऋषि, मुनि,

महापुरुषों का आदर्श चरित्र और भारतदेश की आजादी के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिये हुए महान् योद्धाओं का चरित्र पढ़ाया जाता है। जिससे गुरुकुलीय विद्यार्थी परम देशभक्त बन जाते हैं।

१२. **''समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि''**(अथर्व०३.३०.६)—गुरुकुलों में जात्यादिभेद के विना धनवानों एवं निर्धनों के बालकों को सबको समान नियम, रहन-सहन, वेष-भूषा, भोजन, अध्ययन-अध्यापन, यजन-याजन आदि का अधिकार रहता है।

१३. गुरुकुलों में स्वास्थ्यप्रद एवं पुष्टिदायक, सात्विक भोजन ही दिया जाता है और वैदिक संस्कृति तथा भारतीय सभ्यता के अनुकूल वेष-भूषा, भाषा, आचार-विचार ही व्यवहृत होते हैं।

१४. गुरुकुलीय विद्यार्थियों को शारीरिक, मानसिक, आत्मिक बल प्रदान किये जाते हैं। जिससे वे स्वस्थ, क्रियाशील और मेधावी हो जाते हैं। अनेकों विषम-परिस्थियों एवं विघ्नों के उपस्थित होने पर भी धैर्य से उनका सामना करते हुए अग्रसर होते हैं, पर कभी भी आत्महत्या के लिए तैयार नहीं होते। इतना ही नहीं वे धनादि साधनों के अभाव में भी केवल मानसिक संकल्पशक्ति के द्वारा अनेकों महत्कार्यों को सिद्ध करने का सामर्थ्य रखते हैं।

१५. नियमित दिनचर्या, गुरुकुलसेवा, गोसेवा, अतिथिसेवा आदि के द्वारा विद्यार्थी विनम्र एवं निरभिमानी बन जाते हैं।

१६.गुरुकुलों में विद्याबोध के साथ अध्यापन का प्रशिक्षण (Teacher Training), व्यवस्था-प्रबन्धन (Management), नेतृत्व, वक्तृत्व, लेखन आदि कलाओं का भी प्रशिक्षण दिया जाता है।

१७. आर्षविद्या के अध्ययन से आत्माभ्युदय, मोक्षसम्प्राप्ति के साथ देशसमृद्धि, सामाजिक सुख-शान्ति भी सिद्ध होती हैं।

१८. गुरुकुलों में धार्मिक, नैतिक, चारित्रिक प्रशिक्षण अनिवार्य होता है। सहशिक्षा विवर्जित है। आसन, प्राणायाम, व्यायाम, ध्यान, सन्ध्या, अग्निहोत्र आदि दैनिक अनिवार्य नित्यकर्मों के प्रमुख अंग होते है। गुरु के साथ शिष्य का सम्बन्ध माता-पिता के सम्बन्ध के सदृश ही होता है।

१९. गुरुकुल का प्रशिक्षण व्यापारदृष्ट्या धनार्जन के लिए नहीं होता अपितु इहलौकिक, पारलौकिक सुखों को प्राप्त कराने के लिए होता है।

२०. आचारवान् आचार्यों के द्वारा आदर्शभूत आचरण का अभ्यास कराया जाता है।

२१. विद्यार्थियों के विद्या का बोध सरल, सहज और सुबोध पद्धति से कराया जाता है। जिससे वे उन्नतश्रेणी में उत्तीर्ण हो जातें हैं। अधीत सभी विषयों की परीक्षायें ली जातीं हैं।

२२. अध्यापन संस्कृत और हिन्दी आदि मातृभाषाओं में होता है।

२३. अंग्रेजी, कम्प्यूटर आदि का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

२४. सत्यासत्य, धर्माधर्म, उचितानुचित, विश्वसनीयाविश्वसनीय, वैदिकावैदिक, ईश्वरानीश्वर, आत्मानात्मा, ज्ञानाज्ञान आदि अनेकों विषयों के परिज्ञान से विद्यार्थियों का विवेक विकसित किया जाता है।

२५. प्राथमिक प्रशिक्षण में शुद्ध उच्चारण, सुलेख, संस्कृतभाषा का प्रवेश, सस्वर वेदपाठ, माता-पिता, गुरु, अतिथि, विद्वान्, बन्धुमित्र आदि के साथ करणीय यथायोग्य व्यवहार जैसे मधुरभाषण, आदर-सत्कार, आचारानाचार, श्रद्धा-भक्ति आदि का अभ्यास कराया जाता है।

गुरुकुल और महर्षि दयानन्द सरस्वती

मैकाले के विद्याविधान के कारण भारतीयों में एक ऐसी हीन दृष्टि उत्पन्न हो गयी कि—पाश्चात्य सभ्यता, विद्या, चिकित्सा, चरित्र ही महान् हैं, पर वेद, वैदिक परम्परा, संस्कृति, धार्मिकता, मानवता, देशभक्ति, स्वभाषा, नैतिकता आदि महान् नहीं हैं, ये सब असभ्यता के द्योतक हैं। यह इस देश का बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। इतना ही नहीं वेदमाता और भारतमाता के सभी मानसपुत्र अपने वैभवोपेत अतीत से, दैवीभाषा संस्कृत से, मानवमात्र के लिए कल्याणप्रद वैदिक संस्कृति से और ऋषि-मुनियों की प्राचीन परम्परा से सर्वथा विपरीत दिशा में बहते जा रहे हैं। आज डाक्टर, इञ्जनीयर, वकील, अधिकारी, नेता आदि बनना सरल है, पर मानव बनना असम्भव जैसा हो गया है। इस शोचनीय विषम परिस्थिति का समाधान केवल वैदिक मार्ग में ही है। अत एव महर्षि देव दयानन्द ने कहा था कि—''हे मनुष्यों! वेदों की ओर लौटो।'' केवल कहना ही नहीं, अपितु उन्होंने वैदिकमार्ग को प्रशस्त करने के लिए चार वेद गुरुकुलों की स्थापना भी की थी। पर उस समय वेद और वेदानुकूल ग्रन्थों को ही प्रामाणिक मानने वालों में महर्षि दयानन्द अकेले ही थे। वैदिक सिद्धान्तों के अनुकूल कोई अध्यापक व आचार्य के न मिलने के

कारण और जो मिले भी थे, वे स्वामी जी के वैदिक नियमों में कटिबद्ध न होने के कारण गुरुकुलों को निरस्त करना पड़ा। पुनरपि स्वामी जी का वह प्रयत्न प्रशंसनीय ही नहीं, अपितु अभूतपूर्व है। क्योंकि वे स्वयं वैदिकधर्म के प्रचारार्थ प्रवचन, शास्त्रार्थ, उत्तर-प्रत्युत्तर, शंका-समाधान, वेदभाष्यादि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन, गोरक्षण आदि बृहदâ कार्यों को एकसाथ करते हुए वैदिक आर्ष परम्परा की रक्षा के लिए गुरुकुलों को स्थापित करना, अध्यापकादियों के वेतन का और गुरुकुल की व्यवस्था के लिए आर्थिक प्रबन्ध करना कोई सामान्य विषय नहीं है। इतना ही नहीं उस समय यह भारत अंग्रेजों के आधीन था। वे अपने विद्याविधान को भारत में प्रवेश कराने में चारों ओर पूरे प्रयत्नशील थे और वेद गड़रियों, जंगलियों के गीत हैं, संस्कृतभाषा मृतभाषा है इत्यादि अपप्रचार के षड्यन्त्र भी चल रहे थे। स्वामी जी के सामने उस समय यह भी विषम परिस्थिति थी कि येन केन प्रकारेण आर्षग्रन्थों को पढ़ाने वाले विद्वानों की व्यवस्था करने पर भी उन ग्रन्थों को पढ़ने वाले कोई छात्र उत्साह से सामने नहीं आते थे। क्योंकि उस समय के सभी छात्र सिद्धान्तकौमुदी, पुराण आदि अनार्ष ग्रन्थों को पढ़ने में ही रुचि रखते थे और उस समय के जनमानस में यह भ्रम उत्पन्न किया गया था कि ब्राह्मणेतर लोगों को एवं स्त्रियों को वेदादि शास्त्र और संस्कृतभाषा पढ़नी नहीं चाहिए, पढ़ने से पाप लगता है इत्यादि। पाठ्यग्रन्थों का उपलब्ध होना उस समय अत्यन्त दुर्लभ था। इसप्रकार के अनेकों विषम परिस्थितियों में विविध कार्यों में संलग्न रहते हुए भी आर्ष परम्परा की रक्षा के लिए महर्षि के द्वारा गुरुकुलों की स्थापना, आर्षविद्या की प्रतिष्ठा आदि प्रयत्न किया जाना किसी महान् उद्देश्य की ओर संकेत है। उनके मस्तिष्क में वह महान् उद्देश्य क्या था? यह उन्हीं के शब्दों में आगे जानें –

महर्षि देव दयानन्द का विज्ञापन

इससे मेरा यह विज्ञापन है आर्यावर्त देश का राजा अंगरेज बहादुर से कि संस्कृतविद्या की ऋषि-मुनियों की रीति से प्रवृत्ति करावें। इससे राजा और प्रजा को अनन्त सुख लाभ होगा और जितने आर्यावर्तवासी सज्जन लोग हैं, उनसे भी मेरा यह कहना है कि इस **सनातन संस्कृत विद्या का उद्धार अवश्य करें, ऋषि – मुनियों की रीति से अत्यन्त आनन्द होगा और जो संस्कृत विद्यालुप्त हो जाएगी, तो सब मनुष्यों की बहुत हानि होगी इसमें कुछ सन्देह नहीं।**

सो यह ठीक-ठीक निश्चय हृदय में भया कि वेद और सनातन ऋषि-मुनियों के शास्त्र सत्य हैं, क्योंकि इनमें कोई असम्भव वा अयुक्त कथा नहीं है। जो कुछ है उन शास्त्रों में सत्य पदार्थविद्या और सब मनुष्यों के वास्ते हितोपदेश है और इनके पढ़े विना मनुष्य को सत्य-सत्य ज्ञान कभी न होगा। इसलिए इनको अवश्य सब मनुष्यों को पढ़ना चाहिए और जिन (ग्रन्थों) को (सत्यार्थप्रकाश आदि में) दूर छोड़ने को कहा कि इनको न पढें, न पढावें, न इनको देखें। क्योंकि इनको देखने से वा सुनने से मनुष्य की बुद्धि बिगड़ जाती है। इसलिए इन ग्रन्थों को संसार में रहने भी न दें, तो बहुत उपकार होगा।

विशेष करके आर्यावर्तवासी मनुष्य जब तक सनातन संस्कृत विद्या न पढ़ेंगे, सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग, एक परमेश्वर की उपासना न करेंगे, परस्पर विद्याग्रहण और श्रेष्ठ-व्यवहारों को न करेंगे, परस्पर हित और उपकार न करेंगे, पाषाणादिक मूर्तिपूजन, हठ, दुराग्रह, आलस्य, अत्यन्त विषयसेवा, खुशामदी धूर्तपुरुषों का सङ्ग, मिथ्याविद्या और दुष्ट व्यवहारों को न छोडेंगे, मिथ्या धननाश और बाल्यावस्था में विवाह के त्याग, ब्रह्मचर्याश्रम से शरीर और विद्याग्रहण जब तक न करेंगे और शरीर, बुद्धि विद्या धर्मादिकों की रक्षा और उन्नति न करेंगे, तब तक इनको सुखलाभ होना बहुत कठिन है।

आर्यावर्त देश पर मुझ का बहुत पश्चात्ताप है, क्योंकि इस देश में प्रथम बहुत सुखों और विद्याओं की उन्नति थी। बहुत ऋषि-मुनि, बड़े-बड़े विद्वान् इस देश में भये थे, जिनके अच्छे-अच्छे काम और अच्छे-अच्छे विद्यापुस्तक अब तक चले आते हैं। और अच्छे-अच्छे राजधर्म के चलाने वाले राजा भी हुए हैं, जिन्होंने कभी पक्षपात का कोई कार्य नहीं किया, किन्तु सदा धर्म न्याय में ही प्रवृत्त भये हैं। सो देश इस वक्त ऐसा बिगड़ा है कि इतना बिगाड़ कोई देश में देखने में नहीं आता है। सो हमारी प्रार्थना सब आर्यावर्तवासी राजा और प्रजा से है कि उक्त बुरे कामों को छोड़ के अच्छे कामों में प्रवृत्त होवें और जो कोई अन्यदेशीय राजा आर्यावर्त में है, उससे भी मेरी प्रार्थना यह है

कि इस देश में **सनातन ऋषि-मुनियों के किये उक्त ग्रन्थ और ऋषि-मुनियों द्वारा की गई वेदों की व्याख्या, उसी रीति से वेदों का यथावत् अर्थज्ञान और उनमें उक्त जो व्यवहारों के नियम, उनकी प्रवृत्ति यथावत् करावें। इसी से ही यह देश सुधरेगा, अन्यथा नहीं। और भी यह है—सत्यविद्या और सत्य व्यवहार सब देशों में प्रवृत्त होना चाहिए।** परन्तु आर्यावर्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या संस्कृत ही है, जो कि उक्त प्रकार से प्रथम कही, उसी से इस देश का कल्याण होगा, अन्य देशभाषा से नहीं। अन्य देशभाषा तो जितना प्रयोजन, उतनी ही पढ़नी चाहिए। और विद्यास्थान में संस्कृत ही रखना चाहिए।

सो मैं परमेश्वर से अत्यन्त प्रार्थना करता हूँ कि हे परमेश्वर, हे सच्चिदानन्द अनन्तस्वरूप, हे नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभाव, हे न्यायकारिन्, हे सर्वशक्तिमन्, हे अज, हे अन्तर्यामिन्, हे सर्वजगदुत्पादक, हे सर्वजगद्धारक, हे करुणानिधे! सब जगत् के ऊपर ऐसी कृपा करें जिससे कि सम्पूर्णविद्या का लाभ वेदादिक सत्यशास्त्रों का ऋषि-मुनियों की रीति से हो।(ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र-विज्ञापन- ६,पूर्ण० ११)।

मेरा पूर्णविश्वास है कि **यदि देश में सभ्यता का सूर्य चमके और वेदों का सत्यज्ञान फैले तो अज्ञानी भारत का अन्धकार जिसने जनता को ऐसी अधोगति में डाल दिया है, एक दिन अवश्य दूर हो जायेगा।**(ऋ०द०स० के पत्र-विज्ञापन २६,पूर्ण० ४६)।

वेद और प्राचीन आर्ष ग्रन्थों के ज्ञान के विना किसी को संस्कृत विद्या का यथार्थ फल नहीं हो सकता। और इसके विना मनुष्य जन्म का साफल्य होना दुर्घट है।
(ऋ०द०स० के पत्र-विज्ञापन १८,पूर्ण० ८९)।

अथर्ववेद में अल्लोपनिषद् करके घुसेड़ दिया है। मतलबी पण्डित लोगों ने नये-नये श्लोक बनवाकर लोगों के मनों में भ्रम डाल दिया है, यह बड़े ही दुःख की बात है। इसलिए ऐसा हो कि **स्थान-स्थान पर वेदशालायें (गुरुकुल) हों, उनमें वेदाध्ययन कराया जावे, परीक्षायें लिवायी जावें अर्थात् वेदाध्ययन के हर प्रकार से उत्तेजना मिले, ऐसा प्रयत्न करना चाहिए** (पूना प्रवचन,तृतीयदिन)।

हमारे भरतखण्ड देश से वेदों का बहुत-सा धर्म लुप्त हो गया है और रहा-सहा हम लोगों के प्रमाद से नष्ट होता जा रहा है और उसकी जगह पाखण्ड, अनाचार और दम्भ बढ़ता जा रहा है। सदाचार और सच्चाई से हम लोग दूर होते जा रहें हैं, तभी तो हम सबकी दुर्दशा हो रही है, इसमें आश्चर्य ही क्या है? सनातन आर्षग्रन्थ वेदादि को छोड़कर पुराणों में लिपट रहे हैं और उनकी कल्पित और असम्भव गाथाओं को अपना धर्म समझ रहे हैं। यदि मुझसे कोई पूछे कि इस पागलपन का कोई उपाय भी है या नहीं ? तो मेरा उत्तर यह है कि यद्यपि रोग बहुत बढ़ा हुआ है, तथापि इसका उपाय हो सकता है। यदि परमात्मा की कृपा हुई तो असाध्य नहीं है। **वेद और ६ दर्शनों की सी प्राचीन पुस्तकों के भिन्न-भिन्न भाषाओं में अनुवाद करके सब लोगों को जिससे अनायास प्राचीन विद्याओं का ज्ञान प्राप्त हो सके, ऐसा यत्न करना चाहिए और पढ़े-लिखे विद्वान् लोगों को सच्चे धर्म का उपदेश करने की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए** (पूना प्रवचन, १४वाँ प्रवचन)।

प्रत्येक सभासदों को न्यायपूर्वक पुरुषार्थ से जितना धन प्राप्त हो, उसमें से आर्यसमाज, आर्यविद्यालय (गुरुकुल) तथा आर्यप्रकाश पत्र, इन तीनों के प्रचार के लिए प्रीतिपूर्वक शतांश देवें। अधिक देने से अधिक धर्मफल। इस धन का व्यय इन तीन विषयों में ही हो, अन्यत्र व्यय नहीं किया जाय (ऋ०द०स० के पत्र और विज्ञापन, भाग-२,पृ० ९११)।

जब तक कन्या, पुत्र आठ वर्ष के हों तब तक माता-पिता उनको अच्छी शिक्षा देवें। इस के पीछे ब्रह्मचर्य धारण करा के विद्या पढ़ने के लिए अपने घर से बहुत दूर आप्त विद्वान् पुरुषों और आप्त विदुषी स्त्रियों की पाठशालाओं में भेज देवें। वहाँ पाठशाला में जितने धन का खर्च करना उचित हो, उतना करें। क्योंकि सन्तानों को विद्यादान के विना कोई उपकार वा धर्म नहीं बन सकता। इसलिए इस का निरन्तर अनुष्ठान किया करें (यजुर्वेदभाष्य ११.५८)।

सर्वान् परित्यजेदर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः (मनु०४.१७)

वेदाध्ययन और वैदिक परम्परा के बाधक धनाद्यैश्वर्यों की सभी दुराशाओं का परित्याग करना चाहिए।

- आचार्य, निगमनीडम्-वेदगुरुकुलम्, पिडिचेड़, गज्वेल, सिद्धिपेट, तेलंगाणा-५०२२७८

एतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्?

❑ ईश्वर आर्य...✍

सर्वप्रथम प्रत्याहार कहते किसे है? प्रत्याहार शब्द को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि –**'प्रत्याह्रियन्ते संक्षिप्यन्ते वर्णाऽनेन इति प्रत्याहारः'** अर्थात् जिसके द्वारा वर्णों का संक्षिप्तिकरण किया जाएं उसे प्रत्याहार कहते है। जैसे–**'अच्'** प्रत्याहार कहने मात्र से सभी स्वरों का ग्रहण हो जाता है। इसी प्रकार **हल्** प्रत्याहार कहने मात्र से सभी व्यंजनों का ग्रहण हो जाता है।

किसी भी भाषा का मूल आधार उस भाषा की वर्णमाला को माना जाता है। यह वर्णमाला दो प्रकार की होती है। १. उत्पत्ति क्रम। २. प्रवृत्ति क्रम[१] उत्पत्ति क्रम वर्णमाला, वह वर्णमाला होती है, जिसमें वर्णों का उत्पत्ति के आधार पर क्रम नियुक्त किया जाता है। जैसे स्वर तथा कवर्गादि जो व्यंजन है इसके विपरीत प्रवृत्ति क्रम वर्णमाला में हम जिस आधार पर व्याकरण शास्त्रीय ग्रंथ की सुगमता तथा लाघवता के आधार पर वर्णों को प्रयुक्त करेंगे अथवा जिस आधार पर वर्णो को व्याकरण शास्त्र में प्रवृत्त किया गया हो। जैसे आचार्य पाणिनी मुनि द्वारा अपने व्याकरण शास्त्र के ग्रंथ अष्टाध्यायी के आदि में जो प्रत्याहार सूत्रों में प्रयुक्त की गई है।

अब यहाँ सर्वप्रथम यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि है जो सूत्र अष्टाध्यायी के आदि में प्रत्याहार सूत्र हैं, क्या ये पाणिनी द्वारा प्रोक्त हैं? अथवा आचार्य महेश्वर द्वारा? क्योंकि आज संपूर्ण जगत् में यह धारणा बन गई है, कि यह पाणिनि मुनि द्वारा प्रोक्त न होकर आचार्य महेश्वर **'महेश्वरेण प्रोक्तम्'** द्वारा प्रोक्त है। इन्ही अवधारणाओं के आधार पर सिद्धान्त कौमुदीकार **'भट्टोजीदीक्षित'** ने इन्हें प्रत्याहार सूत्र न कहकर **'इति माहेश्वरसूत्राण्यादिसञ्ज्ञार्थानि'**[२] ऐसा कहकर इन प्रत्याहार सूत्रों को आचार्य महेश्वर द्वारा कृत मान लिया गया है।

इन्हीं के परवर्ती व्याकरणाचार्य आचार्य नागेश ने **'वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'** पर स्वकीय टीकाग्रन्थ **'लघुशब्देन्दुशेखर'** में भट्टोजीदीक्षित के समर्थन में शंका समाधान के रूप में लिखते हैं कि **'ननु चतुर्दश-सूत्र्यामक्षरसमाम्नाय इति व्यवहारानुपपत्तिराम्नाय-साम्नायशब्दयोर्वेदे एव प्रसिद्धेरित्यत आह-माहेश्वराणीति। महेश्वरादगतानीत्यर्थः। महेश्वर-प्रसादलब्धानीति फलितम्। एवञ्चैवमानुपूर्वीका श्रुतिरेवैषा तत्प्रसादात्पाणिनिना लब्धा। श्रुति-मूलकत्वादस्यैव वेदाङ्गत्वम्। अथ प्रमाणम् –**

'येनाक्षरसमाम्नायमधिगम्य महेश्वरात्। कृत्स्नं व्याकरणं प्रोक्तम्' इति शिक्षावचनम्।[३]

अर्थात् यहाँ शंका उत्पन्न करते हुए नागेश जी कहते हैं कि यहाँ अक्षर समाम्नाय का व्यवहार नहीं करना चाहिए क्योंकि आम्नाय तथा समाम्नाय शब्द वेद में ही प्रसिद्ध होने के कारण। इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि इसलिए ही कहा है **'माहेश्वराणि'** यह महेश्वर से आए हैं अथवा प्राप्त हुए है। इसलिए ही यह आनुपूर्वी (पूर्व कर्म से चली आना) श्रुति है। जो महेश्वर की कृपा से पाणिनि को प्राप्त हुई है। श्रुति मूल होने के कारण ही इस व्याकरण का वेदांगत्व है। यहां प्रमाण है 'जिसने अक्षर समाम्नाय को महेश्वर से प्राप्त करके संपूर्ण व्याकरण को कहा है। यह शिक्षावचन है।'

आचार्य नागेश ने महाभाष्य के टीका ग्रंथ **'उद्योत'** में महाभाष्य में व्याख्यायित **'लण्'** सूत्र के **'एतज्ज्ञापयत्याऽचार्यो'**[४] इस पङ्क्ति में प्रयुक्त आचार्य

शब्द को व्याख्यायित करते हुए कहते है कि **'आचार्यः - शिवः'**[५] इसी प्रकार **'हयवरट्'** सूत्र के व्याखान में प्रयुक्त पंक्ति **'एषा ह्याचार्यस्य शैली लक्ष्यते।**[६] प्रस्तुत पंक्ति में आचार्य नागेश आचार्य शब्द को परिभाषित करते हुए कहते है कि **'आचार्यशब्देनाऽनादिः शब्दपुरुषः'**[७]।

इनके अतिरिक्त एक अन्य **'आचार्य नन्दिकेश्वर'** ने अपने ग्रन्थ काशिका में लिखा है कि-

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपंचवारम्। उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्।[८]

अर्थात् नृत्य के अन्त में भगवान शिव ने ९ तथा ५ अर्थात् १४ बार डमरू को बजाया जिससे इन्हें १४ प्रत्याहार सूत्रों की उत्पत्ति हुई है।

इन्हीं विचारों को आधार मानकर आज सम्पूर्ण व्याकरण जगत् इस भ्रम में है कि प्रत्याहार सूत्र पाणिनि के न होकर भगवान शिव द्वारा कृत है।

उपरोक्त विचारों का कोई प्रामाणिक तथ्य नहीं है। इसी कारण **'ऋषि दयानन्द सरस्वती जी'** अपने ग्रंथ **'अष्टाध्यायीभाष्यम्'** में इन्हें शंकर के द्वारा प्रोक्त न मानकर स्वयं पाणिनी मुनि द्वारा प्रोक्त मानते हैं। उनके भाष्य के आधार पर हम कह सकते हैं कि **हयवरट्** तथा **लण्** नामक महाभाष्य में व्याख्यायित सूत्रों में आचार्य शब्द से शिव का ग्रहण करेंगे तो महाभाष्य में व्याख्यायित **प्राक्कडारात् समासः** इस सूत्र में प्रयुक्त पंक्ति-**'एषा ह्याचार्यस्य शैली लक्ष्यते। येनैवावयवकार्य भवति तेनैव समुदायकार्यमपि भवतीति।**[९] अर्थात् आचार्य के व्यवहार से ही ज्ञात होता है कि जिससे अवयव कार्य होता है, उससे समुदाय कार्य भी होता है। अब हम इस पंक्ति पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि **लण्** या **हयवरट्** इन सूत्रों में और न ही **प्राक्कडारात् समासः** इस सूत्र में **आचार्य** शब्द के साथ भाष्यकार **महर्षि पतंजलि** ने **पाणिनि मुनि** अथवा **भगवान शिव** का नाम प्रयुक्त किया है तो फिर हम किस आधार पर आचार्य शब्द से **शिव** का ग्रहण करें। किन्तु यदि हम पाणिनि मुनि का आचार्य शब्द से ग्रहण करें, तो उपयुक्त भी होगा, क्योंकि महाभाष्य में **पाणिनीय व्याकरण** पर भाष्य लिखा गया है, न कि शिव के व्याकरण पर। इस तथ्य से हम स्वीकार कर सकते हैं कि प्रत्याहार सूत्र पाणिनि कृत हैं, न कि भगवान् शिव के द्वारा प्रोक्त।

अब यदि हम यह विचार करें कि आचार्य शब्द से पाणिनि मुनि का ग्रहण क्यों किया जाये तो इस विषय में हम यदि महाभाष्य में व्याख्यायित **हयवट्** सूत्र पर चिन्तन करें तो यह शंका उत्पन्न की जाती है कि अनुबन्धों का अचों के मध्य में ग्रहण क्यों नहीं होता है? इसका समाधान करते हुए भाष्यकार लिखते हैं कि **'आचारात्'**[१०] अर्थात् आचार्य के व्यवहार से जैसे **तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य**[११] यहाँ पर मृषि+कृशेः इस अवस्था में यणादेश करने का व्यवहार न करने से अनुबन्धों को अचों में नहीं स्वीकार किया जाता है। इस भाष्य वचन पर यदि विचार करें तो स्वयं ही उपरोक्त कथित आचार्य नागेश के द्वारा जो आचार्य शब्द से शिव का ग्रहण किया गया है, वह निरस्त हो जाता है क्योंकि अष्टाध्यायी महर्षिपाणिनिकृत है, न कि शिव के द्वारा प्रोक्त, जो हम आचार्य शिव का व्यवहार देखेंगे। इस तथ्य से स्पष्ट है कि भाष्यकार ने सर्वत्र **'आचार्य'** शब्द से पाणिनि मुनि का ही ग्रहण किया है। तथा प्रत्याहार सूत्र पाणिनि मुनि कृत ही है क्योंकि हम सर्वत्र सूत्र व्याख्यानों में उनका व्यवहार देखते है।

यदि हम यह स्वीकार कर भी ले कि यह पाणिनि मुनि द्वारा प्रोक्त न होकर भगवान् शंकर द्वारा प्रोक्त है, तो पाणिनि मुनि से पूर्ववर्ती आचार्यों ने अपने व्याकरणशास्त्रीय ग्रन्थों में इन प्रत्याहारों को उद्धृत क्यों नहीं किया? इस विषय को स्पष्ट करते हुए यदि **आचार्य काशकृत्स्न** का व्याकरण शास्त्रीय ग्रन्थ **'काशकृत्स्न व्याकरण'** देखते हैं, तो हमें उनके सूत्र

इस प्रकार प्राप्त होते हैं जैसे-**सतवर्गयोः शचवर्गयोगे शचवर्गौ**[१२] अर्थात् सकार तथा तवर्ग के शकार व चवर्ग योग में हो तो सकार तथा चवर्ग आदेश होते हैं। किन्तु इसके विपरीत पाणिनि मुनि ने **स्तोः श्चुना श्चुः।**[१३] सूत्र में पूर्वोक्त सूत्र का कार्य दिखा दिया क्योंकि उन्होंने **अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः**[१४] इस सूत्र में उदित् कहकर तु तथा चु से ही तवर्ग तथा चवर्ग का ग्रहण कर दिया है। इस प्रकार आचार्य काशकृत्स्न ने **नामिनो गुणः सार्वधातुकार्धधातुकयोः**[१५] इस सूत्र में प्रयुक्त **नामि** शब्द से **स्वरों** को ग्रहण किया है किन्तु पाणिनि मुनि ने **स्वरों** को **अच्** नाम अपने ग्रन्थ में दिया है। इसी प्रकार इन्होनें **अपृक्त एकवर्णः प्रत्ययः**[१६] यहां सभी स्वर व व्यंजनों का ग्रहण करने के लिए **वर्ण** शब्द का प्रयोग किया है, किन्तु पाणिनि मुनि ने **अपृक्त एकाल्प्रत्ययः**[१७] इस सूत्र में **अल्** नामक प्रत्याहार कहकर सभी वर्णो (स्वर व व्यंजनों) का ग्रहण कराया है।

उपरोक्त सूत्रों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि पाणिनि मुनि ने ही प्रत्याहारों की रचना की है क्योंकि यदि ये **महेश्वर** (आदिपुरूष-शिव) द्वारा रचित होते तो ये प्रत्याहार सूत्र **आचार्य काशकृत्सन** के समय में भी विद्यमान होते तथा इनको अपना व्याकरण ग्रन्थ रचने में इतना वृथा परिश्रम नहीं करना पड़ता।

आचार्य काशकृत्सन के अतिरिक्त **आचार्य शर्ववर्म** प्रणीत व्याकरण ग्रन्थ **कातन्त्रव्याकरण** पर विचार करते है, क्योंकि ये भी महर्षि पाणिनि मुनि के पूर्ववर्ती आचार्य है। इन्होनें अपने ग्रन्थ में स्वयं की वर्णमाला का विधान किया है, जो इस प्रकार है-**सिद्धो वर्णसमाम्नायः, तत्र चतुर्दशादौ स्वराः, दश समनाः, तेषां द्वौ द्वावन्योऽन्यस्य सवर्णौ, एकारादिनि सन्ध्यक्षराणि, कादीनि व्यंजनानि, ते वर्गाः, पंच पंच पंच**[१८]।

इस प्रकार से **आचार्य शर्ववर्म** के **वर्णसमाम्नाय** के सूत्र उद्धृत है। अब यदि हम इस व्याकरण के वर्णसमाम्नाय को देखे तो ज्ञात होता है कि वह पाणिनि के वर्णसमाम्नाय से अत्यन्त पृथक् है। अब हम इनके व्याकरण सूत्रों पर विचार करते है। इन्होंने अपने व्याकरण शास्त्र में सूत्र उद्धृत करते हुए कहा है कि-**समानः सवर्णे दीर्घी भवति परश्च लोप्यम्**[१९] अर्थात् समान वर्ण के परे रहते दीर्घ होता है, तथा परे वाले का लोप हो जाता है । इसी सूत्र को पाणिनि मुनि ने **अकः सवर्णे दीर्घः**[२०] इस सूत्र के द्वारा ही उपरोक्त सूत्र को स्पष्ट कर दिया है, **अक्** प्रत्याहार कहकर। इसी प्रकार इनके सूत्र **इवर्णो यम सवर्णे न च परो लोप्यः, वमुवर्णः, रम् ऋवर्णः, लम् लृवर्णः**[२१] इन सभी सूत्रों को पाणिनि मुनि ने **इक्** तथा **यण्** प्रत्याहार निष्पन्न करके **इको यणचि**[२२] इस एक सूत्र में ही निबद्ध कर दिया है। इस प्रकार इनके **ए अय्, ऐ आय्, ओ अव्, औ आव्,**[२३] इन चारों सूत्रों को **एच्** प्रत्याहार बनाकर **एचोऽयवायावः**[२४] इस एक सूत्र में ही स्पष्ट कर दिया है।

इन सभी सूत्रों पर विचार करें तो यह बात स्पष्ट है कि यदि ये प्रत्याहार सूत्र शिव के द्वारा प्रोक्त होते तो **आचार्य शर्ववर्म** इतने बड़े सूत्र न रचकर इन प्रत्याहारों का प्रयोग अवश्य करते किन्तु इनके व्याकरण शास्त्र में इन प्रत्याहारों का प्रयोग न होने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह प्रत्याहार स्वयं पाणिनि मुनि द्वारा रचित है।

विचारणीय तथ्य-

१. यदि यह प्रत्याहार सूत्र पाणिनि मुनि द्वारा प्रोक्त न होते तो महाभाष्यकार **महर्षि पतंजलि 'द्वितीयाह्निक'** को **प्रत्याहाराह्निक** नाम न देकर **माहेश्वरसूत्राह्निक** नाम रखते।

२. यदि यह पाणिनि कृत न होते तो पाणिनि से पूर्ववर्ती आचार्य इनका अवश्य प्रयोग करते, किन्तु उन्होनें ऐसा नहीं किया है। इसके विपरीत पाणिनि के परवर्ती आचार्यों ने इनका प्रयोग किया है। जैसे-**आचार्य**

चन्द्रगोमिन् का **'चान्द्रव्याकरण'** इस व्याकरण शास्त्र में इन प्रत्याहार सूत्रों का प्रयोग हुआ है।

३. महाभाष्यकार महर्षि पतंजलि ने कहीं पर भी **माहेश्वरसूत्र** ऐसा प्रयोग नहीं किया है किन्तु उन्होनें प्रत्येक स्थान पर **अक्षरसमाम्नाय** शब्द का प्रयोग किया है।

४. पाणिनि मुनि की शैली को देखकर हम कह सकते है कि यदि यह **आचार्य महेश्वर** के होते तो इनका नाम पाणिनि प्रत्याहारों के साथ अवश्य रखते जिस प्रकार पाणिनीय व्याकरण में देखने को मिलता है। जैसे-**लोपः शाकल्यस्य।**[२५] अन्यत्र अन्य आचार्यो का का भी वर्णन मिलता है।

५. यदि यें पाणिनि कृत नहीं होते तो पाणिनि **अइउण्** में अकार की जो विवृत्त प्रतिज्ञा करतें है, तथा अन्तिम सूत्र **अ अ**[२६] इस से संवृत का प्रतिज्ञान करते है। वह नहीं करते, क्योंकि पूर्वाचार्यो के मत पाणिनी ने यथा स्थिति रखें है।

इन तथ्यों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि अष्टाध्यायी में प्रयुक्त प्रत्याहार सूत्र पाणिनि द्वारा ही रचित है, अन्य किसी के द्वारा नहीं।

सन्दर्भसूची :-

१. भूमिका 'पाणिनीय व्याकरण प्रवेशिका' लेखक - युधिष्ठिर उप्रेती, संपादक-डॉ रवीन्द्र कुमार, प्रकाशन-आचार्य प्रणवानंद विश्वनीड न्यास गुरुकुल पौन्धा
२. सिद्धान्त कौमुदी, संज्ञाप्रकरणम्, प्रकाशन-चौखम्भा सुरभारती, पृ. सं. ११
३. लघुशब्देन्दुशेखर, संज्ञाप्रकरणम्, प्रकाशन-चौखम्भा सुरभारती, पृ. सं. १०
४. महाभाष्य - लण्, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ. सं. ११५
५. भाष्य टीका, उद्योत, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ.सं. ११५
६. महाभाष्य- हयवरट्, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ.सं. ११५
७. भाष्यटीका, उद्योत, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ.सं. १०७
८. लघुशब्देन्दुशेखर, संज्ञाप्रकरणम्, प्रकाशन-चौखम्भा सुरभारती, पृ. सं. १२
९. महाभाष्य- प्राक् कडारात् समासः, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ.सं. ५६३
१०. महाभाष्य- हयवरट्, प्रकाशन-हरियाणा साहित्य संस्थान, पृ.सं. १०७
११. अष्टाध्यायी १.२.२५
१२. काशकृत्स्नव्याकरण-सूत्र-९, सम्पादक-युधिष्ठिर मिमांसक, प्रकाशन-भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानम्, पृ.सं. ४२
१३. अष्टाध्यायी ८.४.४०
१४. अष्टाध्यायी ८.४.४०
१५. काशकृत्स्नव्याकरण-सूत्र-२२, सम्पादक-युधिष्ठिर मीमांसक, प्रकाशन-भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानम्, पृ.सं.-४३
१६. काशकृत्स्नव्याकरण-सूत्र १०९, सं-युधिष्ठिर मीमांसक, प्रकाशन-भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानम्, पृ. सं.-७४
१७. अष्टा. १.२.४१
१८.कातन्त्रव्याकरण-१.१.१-१.१.१० प्रकाशन-सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी,पृ. सं.- ३०-७८
१९. कातन्त्र व्याकरण १.२.१, प्रकाशन-सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय पृ. सं. ११९
२०. अष्टा. ६.१.१०
२१. कातन्त्र व्याकरण १.२.८-१.२.११,प्रकाशन-सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,पृ. सं.१४७ -१५३
२२. अष्टा. ६.१.७७
२३. का.व्या.-१.२.२.-१.२.१५, प्रका.-सं. सं. वि.,पृ. सं. १५४-१५९
२४. अष्टा. ६.१.७८
२५. अष्टा. ८.३.१९
२६. अष्टा. ८.४.६८

- स्नातक,
गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

गुरुकुल-गौरव

डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी'...

(अन्तर्राष्ट्रीय कवि)

भाग एक

क्रान्ति-शान्ति की खान हैं गुरुकुल।
संस्कृति के जय - गान हैं गुरुकुल।
तक्षशिला-नालन्दा जैसे धरती के वरदान हैं गुरुकुल।
चरवाहे को मुकुट दिलाते
उन्नति के सोपान हैं गुरुकुल।
गर्व हरण कर सिकन्दरों का
विष्णु गुप्त के ज्ञान हैं गुरुकुल
सिर्फ आंख चिड़िया की देखें
अद्‌भुत तीर कमान हैं गुरुकुल
भारत भाग्य विधाता हैं ये
ज्ञान और विज्ञान हैं गुरुकुल।
सर्वांगीण विकास विजय पथ
बल विक्रम बलिदान हैं गुरुकुल।
महामात्य चाणक्य सरीखे
सजग नयन औश्कान हैं गुरुकुल।
तमस तमीचर यहाँ न टिकते
अतुलनीय बलवान हैं गुरुकुल
गुरुकुल का इतिहास सनातन
वैदिक अग्न्याधान हैं गुरुकुल।
आर्ष पाठ विधि के उन्नायक
अमल धवल प्रतिमान हैं गुरुकुल।
वेद सूर्य के प्रबल प्रचारक
कौन कहे अनजान हैं गुरुकुल
सद्‌गुण के दिनमान हैं गुरुकुल।
दुर्गुण के अवसान हैं गुरुकुल।
अम्बर के जलयान हैं गुरुकुल
दैवी नाव विमान हैं गुरुकुल।
अनुपम अद्‌भुत ऋषि मुनियों के सब से अधिक महान हैं गुरुकुल।
है सच्चा आनंद यहीं पर
सचमुच स्वर्ग समान हैं गुरुकुल।
चेतन हैं जड़ नहीं **'मनीषी'**
वर्णाश्रम की जान हैं गुरुकुल।

भाग दो

आन बान औ'शान हैं गुरुकुल
सच्चे स्वर संधान हैं गुरुकुल।
आर्य जनों के मान हैं गुरुकुल
सामवेद के गान हैं गुरुकुल।
सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग
भारत की पहचान हैं गुरुकुल
संस्कृत है तब ही संस्कृति है
अटल अडिग चट्टान हैं गुरुकुल।
सरस्वती ही रसस्वती है
सारस्वत संतान हैं गुरुकुल।
एक व्याकरण सूर्य अनोखा
विरजानंद समान हैं गुरुकुल।
दयानन्द निकलेंगे इनसे
तर्क प्रवण धनवान हैं गुरुकुल
शब्द ब्रह्म के अनुसंधाता
विरले अनुसंधान हैं गुरुकुल।
परमेश्वर की पुण्य पताका
फहराते बलवान हैं गुरुकुल।
अग्नि वायु आदित्य अंगिरा ऋषियों के सम्मान हैं गुरुकुल
शक्ति भक्ति अनुरक्ति अनोखी
बच्चों की मुस्कान हैं गुरुकुल।
शव को भी शिव करने वाले
गंगा तट के धान हैं गुरुकुल।
धर्म अर्थ कामना मोक्ष के
चतुर्मुखी फलदान हैं गुरुकुल।
कालरात्रि की काट यही हैं
अद्‌भुत स्वर्ण विहान हैं गुरुकुल।
गुरु बिन ज्ञान नहीं है संभव
विधि के अमर विधान हैं गुरुकुल।
मोहन मनमोहक मनमोहन
प्रणवानंदी तान हैं गुरुकुल।
लेखराम सी लगन **'मनीषी'**
श्रद्धानंदी शान हैं गुरुकुल।।

व्यङ्ग्यात्मकः

स्वतन्त्रतादिवससन्देशः

डॉ. प्रशस्यमित्रशास्त्री...
(राष्ट्रपतिसाहित्याकादमीपुरस्कृतः)

आतङ्कवाददहनं नहि शान्तमत्र,
देशे निरन्तरमिदं ज्वलनं विवृद्धम्।
आतङ्कभा-रतमिदं भुवि भारतं नः,
इत्येव बोधयति केसरवर्णवस्त्रम्॥१॥

दैनन्दिनं प्रथितमस्ति महार्घतायाः,
यद् दुष्टप्रभुत्वमिह तेन विवर्णयुक्तम्।
श्वेतं भयेन भरितं जनतामुखं तत्,
सन्द्योतयद् लसति शुक्लमिदं ध्वजे नः॥२॥

हृष्टाः सुपुष्टघनजङ्गलवत् प्रसन्नाः,
ते राजनीतिनिपुणाः प्रभुभावमग्नाः।
भूताः सदैव हरिता सुखिताश्च देशे,
केतोः हरितवसनमत्र व्यनक्ति भावम्॥३॥

भ्रष्टेषु काचिदपि नैव नियन्त्रणा ते,
स्वातन्त्र्यपूर्वकमहो विचरन्तु सर्वे।
अव्याहता गतिरियं ननु भ्रष्टतायाः,
इत्येव बोधयति चक्रमिदं ध्वजे नः॥४॥

मिथ्या सदैव वचने धनसञ्चयश्च,
आत्मीयमूर्तिरचनं परिवारवादः।
सामान्यमानवजने समुपेक्षिता च,
नेतुर्हि पञ्चदशतां कथयत्यगस्तः॥५॥

किं पाठने च पठने च परिश्रमे च,
ग्रन्थान् विलोक्य ददतामधुना परीक्षाम्।
विद्यालयेषु लयतामुपयाति विद्या,
पञ्चत्वमिङ्गयति पञ्चदशो ह्यगस्तः॥६॥

स्वच्छन्दतस्तु क्रियतामिह मूल्यवृद्धिः,
भ्रष्टेषु कर्मसु सदा सततं समृद्धिः।
प्राप्नोतु कष्टमभितश्च जनः समस्तः,
देशे सदा जयतु पञ्चदशो ह्यगस्तः॥७॥

दैनन्दिनं प्रथित एष तु जातिवादः,
राष्ट्रे दृढो भवति सम्प्रति प्रान्तवादः।
ऐक्यं विनष्टमथ सङ्घविधिर्निरस्तः,
देशे कथं जयतु पञ्चदशोऽप्यगस्तः॥८॥

आतङ्कवादिभिरियं जनता समस्ता,
सम्पीडिताऽस्ति कथमद्य यदा च पृष्टः।
नेता वदत्यहह! तत्र विदेशहस्तः,
देशे कथं जयतु पञ्चदशो ह्यगस्तः॥९॥

विस्फोटमद्य सहते तु गवादिकानाम्,
देशे निरन्तरमियं जनता निरीहा।
नेताऽद्य राष्ट्रियहितेषु परं तटस्थः,
देशे कथं जयतु पञ्चदशोऽप्यगस्तः॥१०॥

सर्वं विकाससलिलं मधुरं निपीय,
क्षारमगस्त इव ये प्रददुः प्रजायै।
तेषां विनाशमिह कामयते प्रशस्तः,
देशे सदा जयतु पञ्चदशो ह्यगस्तः॥११॥

-रायबरेली (उत्तरप्रदेशः)

कविता

मेरा गुरुकुल

❑ ब्र. राहुल आर्य...✍

निर्जन कानन के कानों में, जहाँ कोयल कूजन करती है।
मदमाती सुरभित हवा जहाँ, वृक्षों का पूजन करती है।
सरिता का जहाँ सुरम्य जल, निर्भीक खड़ा है जहाँ अचल।
सुरभि फैलाता मरुत् जहाँ, यज्ञ-धूम लिए फिरता प्रतिपल।
वन की जहाँ विविध विहंगम विथियों में है विचरता वटुवरकुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।
कहीं वृक्ष खड़े आमलकी के, कहीं ताल रसाल का साया है।
है लीची की लालिमा कहीं, पीपल की सुनहरी छाया है।
कहीं पिलखन पर कपि कुर्दन है, गौ-वत्सों का कहीं नर्तन है।
कहीं विविध वर्ण के कुसुमों पर, अलि कुल करता रस चूषण है।
मृग-विहग-वृन्द के विविध रवों से व्याप्त जहाँ का तरुवरकुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।
ब्रह्मचारी जहां प्रातः सायं संध्यान करें शुभ सन्ध्या में।
सब ताप विनाशक अग्नि का आधान करें शुभ संध्या में।
सद्भाव से सस्वर श्रुतिग्रन्थों का पाठ जहाँ निशदिन होता।
सद्ग्रन्थों के सद्ज्ञान का पावन पान जहाँ वटुवर पीता।
दर्भाङ्कुर से विस्तीर्ण विपिन में विचरें जहाँ विभय गौ-कुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।
सब भेदभाव को भेद गुरु शिष्यों को शिक्षित करते है।
निज राष्ट्र सुरक्षा हेतु जो शिष्यों को दीक्षित करते है।
जहाँ वेद विरूद्धाचारी को नास्तिक बतलाया जाता है।
सब जगह व्याप्त हो बसा ईश सबको समझाया जाता है।
सब प्रेमाश्रित व्यवहार करें ना रहें जन कोई जहाँ व्याकुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।

वसन्त ऋतु-

नव पर्णों से खगकलरव से आगाज करें ऋतुराज जहाँ।
सब जीवों में नव जीवन का संचार करें ऋतुराज जहाँ।
जो रंग-बिरंगे विविध जाति के कुसुमों से सज जाता है।
वृक्षाश्रित विविध वल्लियों से नव वधुमय जो बन जाता है।
उन्नत शालों के छद-छिद्रों से जहां झांकता रवि-कर-कुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।

ग्रीष्म ऋतु -

निर्मल नभ नभचर आच्छादित जहाँ ग्रीष्म काल में रहता है।
निज तेज से सबको तेजित कर दिनकर निजकर फैलाता है।
सर-सर समीर सुरभि को लिए दिवसान्त समय में बहता है।
रजनी रमणी बन जाती है सुख अतुल चन्द्र बरसाता है।
जहां नियर नदी के नदित नीर से आनन्दित होता नग-कुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।

वर्षा ऋतु -

चहूं ओर व्योम घन घोर घटा से घटाटोप हो जाता है।
घुंघरू बांधे छम-छम करता जब प्रावृट् पांव जमाता है।
विश्रब्ध हुए मेंढ़क भी सस्वर कथा सुनाने लगते है।
सब मौन पड़े झिंगुर द्रुम शाखा से चिल्लाने लगते है।
जहां वर्षा का वन्दन करने बिलमुक्त है होता सरिसृप-कुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।

शरद्-हेमन्त ऋतु -

विश्रान्त हुआ रवि भूमि से जब अपना ताप उठाता है।
शरदिन्दु तब प्रमुदित होकर संगमरमर सा बरसाता है।
हेमन्त जहां हिमचादर से गिरी शिखरों को ढ़क लेता है।
दिनमणि मन्द मुस्काहट से मद अनुपम सबको देता है।
जहां शीत भरी सब विभावरी में विधु बरसाता औषध-कुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।

शिशिर ऋतु -

नव जीवन की नव पर्णों की नव सुमनों की अभिलाषा में।
द्रुम पर्ण गिराता गत ऋतुओं के स्वागत की अभिलाषा में।
उन शुष्क पलाशी छद-दल से वनतल पीला पड़ जाता है।
विभ्रम वन विथियां हो जाती जब शिशिर समय आ जाता है।
जहां शाल पलाश पलाशी से होता है विलासी विपिन विपुल।
नन्दन वन की उस शमस्थली में शोभित है मेरा गुरुकुल।।
परि परिखाएं प्रहरी जिसकी प्रणिधि है प्रभंजन बना हुआ।
प्रभुता जिसकी प्रस्तुत् करता प्रति प्रस्तर श्वेद से सना हुआ।
प्राचुर्य नहीं प्राचीरों का जहां प्रांगण प्रायः प्रकाशित है।
पुष्कर में प्रभाकर ज्यों प्रकीर्त्ति से वन मध्ये प्रस्थापित है।
प्राणी प्रज्ञात है जो प्रख्यात है जो निज पुरा प्रणाली से।
मेरा गुरुकुल है पृथक् चल रहीं इस अन्धी जगदाली से।।

- स्नातक, गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

योगदर्शनशिक्षणम्

❑ शिवदेव आर्यः...✍

अवतरणिका–अथोपायद्वयेन निरुद्धचित्तवृत्तेः कथमुच्यते सम्प्रज्ञातः समाधिरिति?

पदार्थव्याख्या – **अथ**=अब **उपायद्वयेन**=अभ्यास और वैराग्य दोनों उपायों के द्वारा **निरुद्धचित्तवृत्तेः**=निरुद्ध हुई चित्तवृत्ति वाले पुरुष की **सम्प्रज्ञातः समाधिः**= सम्प्रज्ञात समाधि **कथम्**=किस प्रकार की **उच्यते**=बतलाई गई है? **इति**=यह बतलाया जाता है।

व्याख्या – अभ्यास और वैराग्य दोनों उपायों के द्वारा पुरुष की चित्तवृत्ति जब रोक ली जाती है, तब सम्प्रज्ञात समाधि किस प्रकार की होती है, इस विषय को अग्रिम सूत्र (योगदर्शन–१/१७) में व्यक्त किया जा रहा है।

वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात्सम्प्रज्ञातः।

(योगदर्शन.–१/१७)

पदार्थव्याख्या–वितर्क–विचार–आनन्द–अस्मिता–रूपानुगमात्=वितर्क–विचार–आनन्द–अस्मिता रूप स्थितियों के अनुभव से **सम्प्रज्ञातः**=सम्प्रज्ञात समाधि उत्पन्न होती है।

सूत्रार्थ–वितर्क, विचार, आनन्द, अस्मिता रूप स्थितियों के अनुभव से सम्प्रज्ञात समाधि होती है।

व्यासभाष्य– वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोगः। सूक्ष्मो विचारः। आनन्दो ह्लादः। एकात्मिका संविदस्मिता। तत्र प्रथमश्चतुष्टयानुगतः समाधिः सवितर्कः। द्वितीयो वितर्कविकलः सविचारः। तृतीयो विचारविकलः सानन्दः। चतुर्थस्तद्विकलोऽस्मितामात्र इति। सर्व एते सालम्बना समाधयः।

व्यासभाष्य पदार्थ व्याख्या– **चित्तस्य**=चित्त के **आलम्बने**=आलम्बन में **स्थूल आभोगः**=स्थूल वस्तु का अनुभव होना **वितर्कः**=वितर्क कहाता है। चित्त के आलम्बन में **सूक्ष्मः**=सूक्ष्म वस्तु का अनुभव होना **विचारः**=विचार कहाता है। चित्त के आलम्बन में **ह्लादः**=निर्विचार समाधि के वैशारद्य से आध्यात्मप्रसाद उत्पन्न हुए सुख विशेष की आश्रय को **आनन्दः**=आनन्द कहते हैं। चित्त के आलम्बन में **एकात्मिका**=स्वात्मा की **संवित्**=प्रतीति को **अस्मिता**=अस्मिता कहते हैं। **तत्र**=उनमें **प्रथमः**=प्रथम समाधि **चतुष्टयानुगतः**=वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता चारों से युक्त **सवितर्कः**=वितर्कानुगत **समाधिः**=समाधि होती है। **द्वितीयः**=द्वितीय समाधि **वितर्कविकलः**=वितर्क से रहित अर्थात् विचार, आनन्द और अस्मिता से युक्त रहने वाली **सविचारः**=विचारानुगत सम्प्रज्ञात समाधि होती है। **तृतीयः**=तृतीय समाधि **विचारविकलः**=विचार से रहित अर्थात् आनन्द और अस्मिता युक्त रहने वाली **सानन्दः**=आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधि होती है। **चतुर्थः**=चतुर्थ समाधि **तद्विकलः**=आनन्द से भी रहित **अस्मितामात्र**=अस्मिता मात्र होती है, **इति**=ऐसा है। **एते**=ये **सर्व**=सभी समाधियां **सालम्बनाः**=चित्त के आलम्बन से होने से सालम्बन होती हैं।

व्यासभाष्य व्याख्या– वितर्क का अर्थ चित्त के आलम्बन में स्थूलभूत पृथिवी आदि का साक्षात्कार है। 'विचार'का अर्थ चित्त के आलम्बन में सूक्ष्मभूत अर्थात् तन्मात्राओं का साक्षात्कार है। आनन्द का अर्थ ह्लाद=सुख की अनुभूति अर्थात् इन्द्रियों के साक्षात्कार से सुख की अनुभूति। अस्मिता का अर्थ है चित्त के आलम्बन में जीवात्मा का साक्षात्कार।

प्रथम–**वितर्का**नुगत समाधि में स्थूलभूत, तन्मात्राएँ, इन्द्रियाँ और जीवात्मा ये चारों विषय योगी के रहते हैं। इसको चतुष्ट्यानुगत कहा जाता है।

द्वितीय–वितर्क से रहित **विचार** समाधि है। तृतीय–विचार से रहित **आनन्द** समाधि है। चतुर्थ–आनन्द से रहित **अस्मिता** समाधि है। ये सब आलम्बन सहित समाधियाँ हैं।

शेष अग्रिम अंक में...

३७० अनुच्छेदमुद्दिश्य

काश्मीरघाटी सधवा बभूव

❑ आकाशार्यः...✍

नरेन्द्रचाणक्यमतिप्रयाताः,
नन्दादिभूता मुगलादिचित्ताः।
देशाधिचन्द्रस्य धृताधिकोपात्,
काश्मीरघाटी सधवा बभूव॥१॥

अर्थ – प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की चाणक्यरूपी बुद्धि से नन्दरूपी गले हुए चित्त वाले (मुगल) भाग गये तथा राष्ट्रसैन्यरूपी चन्द्रगुप्त के धारित क्रोध से वह काश्मीरघाटी सौभाग्यवती (सधवा) हो गयी।

निधत्तपादे ज्ञनरेन्द्रराज्ञि,
सीमन्तरागं सहसा प्रलभ्य।
कृतश्श्रमः कस्य वृथा हि याति,
काश्मीरघाटी सधवा बभूव॥२॥

अर्थ – मतिमान् नरेन्द्रमोदी जी के पदार्पण करने से अचानक मांग के सिन्दूर को प्राप्त करके काश्मीरघाटी पुनः सधवा हो गयी क्योंकि किया हुआ परिश्रम किसका व्यर्थ होता है? अर्थात् किसी का नहीं होता।

विदीर्णचित्ताखलु विज्ञपत्नी,
वियोगदुःखाभिवृता मृगाक्षी।
भूयो नरेन्द्रस्य समागतेऽस्मिन्,
काश्मीरघाटी सधवा बभूव॥३॥

अर्थ – विदारित हुए मन वाली निश्चय से वह मृगनयना विद्वानपत्नी वियोग दुःख से अति दुःखित हुई लेकिन फिर से श्री नरेन्द्र मोदी के आ जाने से वह कश्मीरघाटी सधवा हो गई।

जन्मोत्सवोऽयं शुभकामपूर्णः,
हन्ति व्यथां तप्ततपोधनानाम्।
स्वर्गस्थपाताश्चित्रीयतेऽद्य,
काश्मीरघाटी सधवा बभूव॥४॥

अर्थ – आज यह नवीन तथा शुभकामनाओं से पूर्ण वास्तविक स्वतन्त्रता रूपी प्रथम जन्मदिवस दुःखित तथा व्यथित कश्मीरी पण्डितों की व्यथा का प्रतिघात कर रहा है तथा स्वर्गसमान भूमि में ही वह नरक (पाक अधिकृत कश्मीर) आज आश्चर्यचकित हो रहा है कि कश्मीर घाटी सधवा हो गयी।

क्व सा कराली यवनालिचाली,
लीलायमाना त्रिदिवे ललामा।
पाकासुरी पापरता विनष्टा,
काश्मीरघाटी सधवा बभूव॥५॥

अर्थ – कहाँ वह भयंकर चञ्चल यवनपंक्ति स्वर्ग (कश्मीर) में सुन्दर शोभायमान होती हुई पाकासुरी (पाक) स्वर्ग में होने वाली आसुरी प्रवृत्तियाँ, जो पाप में लगी हुई थी, वे नष्ट हो गयी इसलिए वह कश्मीरघाटी सधवा हो गई।

क्वालङ्कृता सान्द्रसितेन्दुशोभा,
केतुप्रकोपाभ्रमलावरोहा।
नष्टाभ्रलीला काश्मीरतायाः,
द्विजकीर्त्तिरुपा सधवा बभूव॥६॥

अर्थ – कहाँ तो उसने घनी चाँदनी वाले चन्द्रमा की शोभा अलङ्कृत की थी, लेकिन केतु (पाकिस्तान) के प्रकोप तथा बादलों (पाकसमर्थकों) की मलीनता से प्रभावित हो गई, लेकिन असली कश्मीरियत द्वार उन बादलों की लीला नष्ट हो गई तथा वह तत्स्थानीय पण्डितों की यशरुपा घाटी सधवा हो गई।

– शास्त्री तृतीय वर्ष
गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

संस्कृतशिक्षणम्

❑ शिवदेव आर्य...✍

क्रमशः...

❍ **अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते।** (अ. २/३/२९) अन्य, आरात्, इतर (इन अर्थ वाले अन्य शब्द भी), ऋते, पूर्व आदि दिशावाची शब्द (इनका देश, काल अर्थ हो तो भी), प्राक् आदि शब्दों के साथ पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा- **मम देवदत्तात् अन्यं न मित्रम्।** (मेरा देवदत्त से अन्य कोई मित्र नहीं है।) **ग्रामात् आरात् गुरुकुलं वर्तते।** (ग्राम के दूर गुरुकुल है।) **धर्मात् इतरः न मार्गः।** (धर्म से अन्य कोई मार्ग नहीं।) **ग्रामात् पूर्वं/उत्तरं वनं वर्तते।** (गॉव के पूर्व/उत्तर में वन है।) **विमर्श** - यहाँ पर अन्यः शब्द के प्रयोग से **देवदत्तात्** में**,** आरात् शब्द के प्रयोग से **ग्रामात्** में**,** इतरः शब्द के प्रयोग से **धर्मात्** में, पूर्वम्, उत्तरम् के प्रयोग के कारण **ग्रामात्** में पञ्चमी विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

❍ **पृथग्विनानानाभिस्तृतीयान्यतरस्याम्** (अ. २/२/३२) पृथक्, विना और नाना के साथ पञ्चमी, तृतीया और द्वितीया विभक्ति होती है। यथा- **श्रमात्/श्रमेण/ श्रमं विना विद्या न अस्ति।** (श्रम के विना विद्या नहीं है।) **भरतः भातुः/भ्रात्रा/ भ्रातरं पृथक् निवसति।** (भरत भाई के विना रहता है।) **विमर्श** - यहाँ **विना** शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसकारण से **श्रमात्/श्रमेण/श्रमं** में पञ्चमी, तृतीया और द्वितीया का प्रयोग किया है।

❍ **दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च** (अ. २/३/३५) दूर और अन्तिक (निकटवाची) शब्दों में पञ्चमी, तृतीया और द्वितीया तीनों विभक्तियाँ होती हैं। यथा-**नगरात्/ नगरस्य दूरात/दूरेण/दूरं गुरुकुलं वर्तते।** (नगर से दूर गुरुकुल है।) **विमर्श**-यहाँ दूर शब्द का प्रयोग किया गया है, अतः **दूरात/दूरेण/दूरं** में पञ्चमी, तृतीया एवं द्वितीया विभक्ति का प्रयोग किया है।

सम्बन्ध एवं षष्ठी विभक्ति विचार

❍ **षष्ठी शेषे** (अ. २/३/५०) **कारकप्रातिपदिकार्थ-व्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिसम्बद्धः** सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता, क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध क्रिया से नहीं होता है। सम्बन्ध के विषय में कारक विचार में कहा जा चूका है।

जो नियम अन्य सभी विभक्तियों व कारकों में कह दिये हैं, उनको छोड़कर जो अन्य शेष कार्य रह जाते हैं, उनका ग्रहण षष्ठी विभक्ति में किया जायेगा। षष्ठी विभक्ति प्रायः सम्बन्ध का बोध कराती है। हिन्दी में का, के, की इन अर्थों में षष्ठी विभक्ति होती है।

❍ **षष्ठी हेतुप्रयोगे** (अ. २/३/२६) हेतु (प्रयोजन) शब्द के साथ षष्ठी विभक्ति होती है। यथा - **बालकः पठनस्य हेतोः अत्र वसति।** (पढ़ने के लिए यहाँ रहता है।) **विमर्श**-यहाँ पढ़ने के प्रयोग में हेतु शब्द का प्रयोग किया गया है, अतः **पठनस्य** में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

शेष अग्रिम अंक में...

-गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य, विद्या और वेदोक्त-धर्म का प्रचार होता है वही देश सौभाग्यवान् होता है।

-महर्षि दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थप्रकाश 'तृतीय समुल्लास'

श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय-न्यास

द्वारा सञ्चालित शाखा संस्था-७

महर्षि दयानन्द कन्या गुरुकुल महाविद्यालय,
देवनगर, घुचापाली, बरगढ़ (ओडिशा)

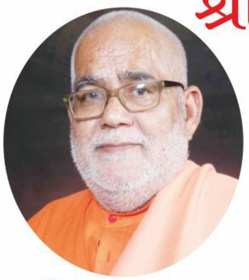

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

आचार्या शारदा

गुरुकुल देवनगर : एक परिचय

स्थापना - सन् २००८

संस्थापक - स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

संस्थापक आचार्य- नरदेव यजुर्वेदी

आचार्या - आचार्या शारदा

प्रबन्धक - आचार्य अनन्त

सञ्चालन - श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय न्यास,
११९ गौतम नगर, नई दिल्ली-४९

शिक्षण का प्रकार - आर्ष शिक्षा

शिक्षण मान्यता - राज्य बोर्ड एवं महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

शिक्षण स्तर - कक्षा प्रथमा से शास्त्री पर्यन्त

छात्राओं की संख्या- १२०

भूमि - ३० एकड़

शिक्षणेतर प्रकल्प - संगणक शिक्षा, पुस्तकालय, गोशाला, क्रीडाक्षेत्र, आर्य समाज का प्रचार-प्रसार आदि करना

पूर्ण पता - महर्षि दयानन्द कन्या गुरुकुल महाविद्यालय,
पाईकमाल, जिला-बरगढ़ (ओडिशा)-२४८००७

दूरभाष - +91-9937649319, 9937990600

अणुसंकेत - gurukulkanya@gmail.com

पंजीयन संख्या : UTTBIL/2008/23546 डाक पंजीयन नं. : UA/DO/DDN/397/2019-2021

पतंजलि®
प्रकृति का आशीर्वाद

करोड़ों देशवासियों का
भरोसेमन्द हर्बल टूथपेस्ट
दन्त कान्ति

दन्त कान्ति के लाभ

✓ लौंग, बबूल, नीम, अकरकरा, तोमर, बकुल आदि बेशकीमती जड़ी बूटियों से निर्मित दन्त कान्ति, ताकि आपके दाँतों को मिले लंबी उम्र व असरदार प्राकृतिक सुरक्षा।

✓ पायरिया, मसूड़ों की सूजन, दर्द व खून आना, सेंसिटिविटी, दुर्गन्ध एवं दाँतों के पीलेपन आदि को दूर करे।

✓ कीटाणुओं से लम्बे समय तक बचाकर दे दाँतों को प्राकृतिक सुरक्षा कवच।

पूरी दुनिया अब नैचुरल प्रोडक्ट्स को अपना रही है
आप भी पतंजलि के नैचुरल प्रोडक्ट्स अपनाइए और प्रकृति का आशीर्वाद पाइए

आवाहन– राष्ट्र के जागरुक व्यापारियों व ग्राहकों से हम विनम्र आवाहन करते हैं कि करोड़ों देश भक्त भारतीयों की तरह, आप भी पतंजलि के उत्पादों को अपनी दुकानों व दिलों में सर्वोच्च प्राथमिकता देकर जन–जन तक पहुँचाएं और देश की सेवा व समृद्धि में योगदान दें। जिससे महात्मा गाँधी, भगत सिंह व राम प्रसाद बिस्मिल आदि सभी महापुरुषों के स्वदेशी अपनाने के सपने को मिलकर साकार कर सकें।

पतंजलि आयुर्वेद के लगभग 500 उत्पाद हैं, ये शुद्ध खाद्य उत्पाद व हर्बल सौन्दर्य उत्पाद हमारे पतंजलि स्टोर्स के साथ ओपन मार्केट की दुकानों पर भी उपलब्ध हैं।

मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक एवं स्वामी : आचार्य धनञ्जय द्वारा श्रीमद्दयानन्द आर्ष-ज्योतिर्मठ-गुरुकुल, दून वाटिका-२ पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित एवं जयरति प्रिन्टिंग प्रेस, ३५ कांवली रोड, देहरादून से मुद्रित।
मुद्रण तिथि - ३ अगस्त २०२० :: डाक प्रेषण तिथि - ८ अगस्त २०२०